वर्ष 2 | अंक 1 | जनवरी-जून 2026 आई. एस. एस. एन. : 3139-8375 (ऑनलाइन)

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र की हिंदी वैज्ञानिक पत्रिका

परमाणु विज्ञान

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र की हिंदी वैज्ञानिक पत्रिका

परमाणु विज्ञान

वर्ष 2 | अंक 1 | जनवरी-जून 2026

'परमाणु विज्ञान' पत्रिका में प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचारों, सूचनाओं, जानकारियों, आदि से भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई या इस अंक के संपादन/प्रकाशन समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। यह पत्रिका नाभिकीय विज्ञान एवं अभियांत्रिकी में हो रहे अनुसंधान एवं इसके व्यापक सामाजिक अनुप्रयोगों के संबंध में प्रामाणिक वैज्ञानिक जानकारी का हिंदी में प्रचार एवं प्रसार करने हेतु अर्ध-वार्षिक रूप से प्रकाशित की जाती है।

इस अंक में...

रेडियोधर्मियों की कहानी - आरंभ से अब तक *अनुसंधान एवं उत्पादन में जुटा परमाणु ऊर्जा विभाग*	1
विकिरण से नवाचार - कृषि क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन	6
असाध्य रोगों का उपचार - लो-डोज़ रेडिएशन थेरेपी	12
'स्काडा' - आधुनिक जीवन का गुमनाम नायक	16
विकिरण से बढ़ाएं मत्स्य उत्पादों की शेल्फ-लाइफ	20
हाइड्रोजन - भविष्य का हरित ईंधन *आयोडीन-सल्फर ताप-रासायनिक प्रक्रिया से हाइड्रोजन उत्पादन*	24
रेडियो इमेजिंग - जीवाणु संक्रमण के निदान में अहम	27
शून्य कार्बन उत्सर्जन के लक्ष्य की ओर बढ़ता भारत	31
प्रेशर कुकर में नैनोकणों का संश्लेषण	34
प्लाज़्मा फोकस संलयन - गैर-रेडियोधर्मी बहु-विकिरण स्रोत	38
पर्यावरण के संरक्षक हैं परमाणु ऊर्जा संयंत्र	43
मृदा-खनिज (क्ले-मिनरल्स) एवं परमाणु ऊर्जा	49
रेअर अर्थ की रेस - जो जीता वही सिकंदर नए ज़माने के नए विलायक	53
विकिरण मॉनिटरन घड़ी *विकिरण स्तर की सतत जानकारी देने में समर्थ*	58
भा.प.अ. केंद्र परिसर में रंग-बिरंगी तितलियाँ	60
कुछ अनकही दास्तानें	64

संपादन मंडल

मुख्य संरक्षक
श्री विवेक भसीन, *निदेशक, भा.प.अ. केंद्र*

सह-संरक्षक
श्री के. जयकुमार, *नियंत्रक, भा.प.अ. केंद्र*

प्रकाशन/संपादकीय समिति

अध्यक्ष
डॉ. ए. के. दुरेजा
निदेशक, ज्ञान प्रबंधन वर्ग एवं अध्यक्ष, मानव संसाधन विकास प्रभाग, भा.प.अ. केंद्र

मुख्य संपादक
श्री मनोज सिंह
अध्यक्ष, वैज्ञानिक सूचना संसाधन प्रभाग, भा.प.अ. केंद्र

संपादक
श्री सैयद इरफ़ान अली
उप निदेशक (राजभाषा), हिंदी अनुभाग, भा.प.अ. केंद्र

सह-संपादक
डॉ धीरज जैन
वैज्ञानिक अधिकारी-एच, विकिरण एवं प्रकाश रसायनिकी प्रभाग, भा.प.अ. केंद्र

सदस्यगण
डॉ (श्रीमती) चेल्लम श्रीविद्या
वैज्ञानिक अधिकारी-एच, आयुर्विज्ञान प्रभाग, भा.प.अ. केंद्र
डॉ. अमित कुमार
वैज्ञानिक अधिकारी-एच, विकिरण जैविकी एवं स्वास्थ्य विज्ञान प्रभाग, भा.प.अ. केंद्र
श्री हेमंत कुमार स्वेन
वैज्ञानिक अधिकारी-जी, सुदूर प्रहस्तन एवं रोबोटिक्स प्रभाग, भा.प.अ. केंद्र
डॉ. कृष्ण कुमार सिंह
वैज्ञानिक अधिकारी-जी, खगोल भौतिकी विज्ञान प्रभाग, भा.प.अ. केंद्र
सुश्री शुचिता बहादुर
वैज्ञानिक अधिकारी-एफ, विकिरण संरक्षा प्रणाली प्रभाग, भा.प.अ. केंद्र
श्री निखिलेश नव विज्ञान
वैज्ञानिक अधिकारी-एफ, पदार्थ संसाधन एवं संक्षारण अभियांत्रिकी प्रभाग, भा.प.अ. केंद्र
श्री तत्सत द्विवेदी
वैज्ञानिक अधिकारी-ई, लेसर एवं प्लाज़्मा प्रौद्योगिकी प्रभाग, भा.प.अ. केंद्र
डॉ. गौतम विश्वकर्मा
वैज्ञानिक अधिकारी-ई, नाभिकीय कृषि एवं जैव-प्रौद्योगिकी प्रभाग, भा.प.अ. केंद्र
श्री माधव एन.
तकनीकी अधिकारी-डी, वैज्ञानिक सूचना संसाधन प्रभाग, भा.प.अ. केंद्र

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र की हिंदी वैज्ञानिक पत्रिका

परमाणु विज्ञान

वर्ष 2 | अंक 1 | जनवरी-जून 2026

संपर्क सूत्र
श्री मनोज सिंह
मुख्य संपादक
परमाणु विज्ञान
वैज्ञानिक सूचना संसाधन प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र
ट्रॉम्बे, मुंबई - 400 085 (महाराष्ट्र)
ई-मेल- parmanuvigyan@barc.gov.in; smanoj@barc.gov.in

परमाणु विज्ञान पत्रिका नाभिकीय विज्ञान, अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी में हो रहे अनुसंधान एवं विकास तथा इसके व्यापक सामाजिक अनुप्रयोगों के संबंध में प्रामाणिक वैज्ञानिक जानकारी का हिंदी में प्रचार एवं प्रसार करने हेतु एक माध्यम है।

अध्यक्ष की कलम से...

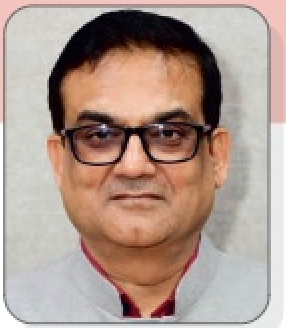

डॉ. आदर्श कुमार दुरेजा
अध्यक्ष, परमाणु विज्ञान

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई द्वारा प्रकाशित **परमाणु विज्ञान** का नवीनतम अंक आपको भेंट करते हुए मुझे अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। सामाजिक सरोकार से जुड़े वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों के प्रतिपादन में **परमाणु विज्ञान** की भूमिका अहम है। यह सर्वविदित है कि हिंदी में मूल रूप से वैज्ञानिक लेखन करने वाले लेखकों की संख्या अत्यंत अल्प है, फिर भी, हमारा प्रयास रहेगा कि **परमाणु विज्ञान** पत्रिका में उत्साही लेखकों को लेख प्रस्तुत करने हेतु प्रेरित करते हुए, उनके लेखों के माध्यम से, इसे समकालीन हिंदी वैज्ञानिक पत्रिकाओं से उत्कृष्ट बनाया जा सके।

पूर्णता में पल्लवित होना ही मनुष्य जीवन की परिसीमा होती है। इस आशय हेतु वसुधा के सभी हिस्सों का संतुलित विकास हो। परमाणु विज्ञान का यह अंक इसी दिशा में एक प्रयास है। यह अंक 16 लेखों का संग्रह है, जिसमें विज्ञान की विविध शाखाओं जैसे कृषि, आयुर्विज्ञान, प्रौद्योगिकी, विकिरण, पर्यावरण, हरित ऊर्जा, शून्य कार्बन उत्सर्जन इत्यादि को शामिल किया गया है। इसमें सुधी लेखकों द्वारा ब्यौरे-वार चर्चा की गई है। हमें विश्वास है कि यह अंक पाठकों की वैज्ञानिक सोच एवं कौशल को समृद्ध करेगा।

भारतीय भाषाएं मानव जीवन के विभिन्न क्रियाकलापों से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हैं। आज विज्ञान एवं तकनीकी में नित नये प्रयोग एवं अनुसंधान के फलों को सहज एवं सरल पठनीय हिंदी भाषा के माध्यम से देश के कोने-कोने तक पहुंचाना हम सभी का संकल्प होना चाहिए। इसके लिए, हम सभी को प्रतिबद्धता के साथ प्रयत्न करते हुए आगे बढ़ते रहना है।

सभी सुधी पाठकों से अपेक्षा है कि वे पत्रिका के संबंध में सुझावों एवं प्रतिक्रियाओं से हमें निरंतर अवगत कराते रहें ताकि इसमें यथा-संभव सुधार एवं परिष्कार किया जा सके। आप जिन विषयों से संबंधित लेखों को इस पत्रिका के माध्यम से पढ़ना और समझना चाहते हैं उसे अपने पत्र/ई-मेल के द्वारा अवगत कराएं ताकि उन विषयों को आगामी अंकों में शामिल कर इसे और अधिक रुचिकर बनाने का प्रयास किया जा सके।

हम पत्रिका के परामर्श एवं संपादन समिति के सदस्यों के प्रति विशेष आभार प्रकट करते हैं जिन्होंने अपने विषय-विशेषज्ञता के माध्यम से इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों को समुचित आकार प्रदान करने में सहयोग किया है। हम, इस अंक में प्रस्तुत लेखों के लेखकों के प्रति भी आभार प्रकट करते हैं जिन्होंने ससमय लेख प्रस्तुत करने के साथ अन्य प्रकार के आवश्यक सहयोग भी दिए। हमें पूर्ण विश्वास है कि इस पत्रिका के प्रकाशन से जुड़े सभी सहयोगियों, लेखकों, लेखकों को लेखन कार्य हेतु प्रेरित एवं प्रोत्साहित करने वाले महानुभावों का भरपूर सहयोग आगे भी मिलता रहेगा।

आप शुभ-चिंतकों के बहुमूल्य सुझावों की हमें प्रतीक्षा रहेगी।

(डॉ. आदर्श कुमार दुरेजा)

मुख्य संपादक एवं संपादक की कलम से...

मनोज सिंह
अध्यक्ष, एसआईआरडी एवं
मुख्य संपादक, परमाणु विज्ञान

(मनोज सिंह)

सैयद इरफ़ान अली
उप निदेशक (राजभाषा) एवं
संपादक, परमाणु विज्ञान

(सैयद इरफ़ान अली)

विज्ञान के विविध आयामों, नवीनतम अनुसंधानों एवं समकालीन वैज्ञानिक उपलब्धियों पर केंद्रित '**परमाणु विज्ञान**' के द्वितीय अंक को सुधी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अपार हर्ष की अनुभूति हो रही है। यह अंक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के निरंतर विकसित होते परिदृश्य को प्रतिबिंबित करता है तथा विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे नवीन एवं अद्यतन अनुसंधान, नवाचारों और वैज्ञानिक प्रगति को सरल एवं सहज भाषा में पाठकों तक पहुँचाने का एक विनम्र प्रयास है।

पर्यावरण, स्वास्थ्य, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी किसी भी प्रगतिशील एवं समृद्ध समाज की सुदृढ़ आधारशिला है। इन क्षेत्रों में होने वाली प्रगति न केवल सतत विकास के लक्ष्यों को गति प्रदान करती है, बल्कि शिक्षा, संस्कृति, सामाजिक जागरूकता और आर्थिक विकास को भी नई दिशा देती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं तार्किक सोच का विकास एक जागरूक और सशक्त समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हमें विश्वास है कि इस अंक के लेख पाठकों को नई वैज्ञानिक जानकारियों से समृद्ध करने के साथ-साथ भावी लेखकों एवं युवा वैज्ञानिकों को हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के सृजन के लिए प्रेरित करेंगे।

इस अंक में हम, 16 लेखों का संग्रह प्रस्तुत कर रहे हैं, जो विज्ञान की विविध शाखाओं जैसे आयुर्विज्ञान, प्रौद्योगिकी, पर्यावरण, हरित ऊर्जा, कृषि, विकिरण, शून्य कार्बन उत्सर्जन, इत्यादि पर आधारित हैं। इसमें विषय-विशेषज्ञ लेखकों द्वारा ब्यौरे-वार चर्चा की गई है। इस अंक से '**कुछ अनकही दास्तानें**' कॉलम लेखन प्रारंभ कर रहे हैं। आशा करते हैं कि आप सभी को यह नया स्तंभ लेखन पसंद आएगा।

पत्रिका को और अधिक उपयोगी, प्रासंगिक एवं पाठक-केंद्रित बनाने के लिए, हम इस अंक से '**पढ़ें, परखें, सुझाव दें**' कॉलम प्रारंभ कर रहे हैं। आपके सुझाव एवं प्रतिक्रियाएँ हमारे लिए अत्यंत मूल्यवान हैं। अतः हम सभी सुधी पाठकों से अनुरोध करते हैं कि आप अपने विचार, सुझाव एवं प्रतिक्रियाएँ हम तक निरंतर ईमेल के माध्यम से पहुँचाते रहें। आपके बहुमूल्य सुझावों से पत्रिका की गुणवत्ता में निरंतर सुधार तथा समाज में इसकी स्वीकार्यता एवं पहुँच को और व्यापक बनाने में सहायता मिलेगी।

हम, पत्रिका की परामर्श एवं संपादन समिति के विशेषज्ञों के प्रति विशेष सहयोग हेतु आभार व्यक्त करते हैं। हम उन विद्वान लेखकों एवं रचनाकारों के प्रति अत्यंत आभारी हैं जिन्होंने **परमाणु विज्ञान** के इस अंक हेतु अपने लेख प्रेषित किए हैं। आगे भी, विद्वान लेखकों से इसी प्रकार के सहयोग की अपेक्षा रहेगी।

रेडियोधर्मियों की कहानी - आरंभ से अब तक

अनुसंधान एवं उत्पादन में जुटा परमाणु ऊर्जा विभाग

डॉ. पर्णिका दास

परिवर्ती ऊर्जा साइक्लोट्रॉन केंद्र, कोलकाता

रेडियोधर्मी शब्द का संबंध किसी धर्म विशेष मानने वाले मनुष्यों अथवा समुदाय से नहीं, बल्कि 'रेडियो-समस्थानिकों' से है जिनका उपयोग वर्तमान में अनेक क्षेत्रों जैसे कि, चिकित्सा, अनुसंधान, कृषि, उद्योगों, इत्यादि में बहुतायत से हो रहा है, और जिनके बारे में परिचित होना जन-सामान्य के लिए भी उतना ही आवश्यक है जितना कि वैज्ञानिक समुदाय के लिए। प्रस्तुत लेख का मुख्य उद्देश्य इन रेडियोधर्मियों से परिचित कराना ही है। एक वाक्य में कहा जाए तो, परमाणु के वे नाभिक जो विकिरण (रेडिएशन) उत्सर्जित करते हैं, उन्हें रेडियोधर्मी के नाम से जाना जाता है। अब हमारे मन में अनेक प्रश्न उठते हैं, जैसे कि, कौन-कौन से परमाणु नाभिक रेडियोधर्मी होते हैं? इनकी कुल संख्या कितनी है? रेडियोधर्मिता की खोज कैसे और कब हुई? विकिरण उत्सर्जित करने वाले इन स्रोतों का उत्पादन कैसे होता है? इनके उत्पादन, उपयोगों एवं प्रबंधन में परमाणु ऊर्जा विभाग की क्या भूमिका है? इन सब प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए, आइए, महान वैज्ञानिक एंटोनी हेनरी बेकरेल से शुरू करते हुए रेडियोसमस्थानिकों और रेडियोधर्मिता से जुड़ी इस रोचक और ऐतिहासिक कहानी को प्रारंभ करते हैं।

समय था वर्ष 1896 का जब प्रोफेसर एंटोनी हेनरी बेकरेल पेरिस स्थित 'नेशनल म्यूज़ियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री' (म्यूज़ियम नेशनल द' हिस्ट्वॉर नेचुरल) में कार्यरत थे। यह केवल एक प्रदर्शनी केंद्र ही नहीं था, बल्कि उसमें अनुसंधान प्रयोगशालाएँ भी थीं। प्रोफेसर बेकरेल उस समय प्रतिदीप्ति (फ्लोरेसेंस) एवं स्फुरदीप्ति (फॉस्फोरेसेंस) जैसे विषयों पर अध्ययनरत थे। वे उस समय यूरेनियम के लवणों (सॉल्ट्स) पर भी अध्ययन कर रहे थे। उनका अनुमान था कि सूर्य के प्रकाश से यूरेनियम 'ऊर्जा' प्राप्त करेगा जिसका प्रभाव फोटोग्राफिक कागज़ पर पड़ेगा। जब वे इस अध्ययन की योजना बना रहे थे, संयोगवश तब सूर्य के प्रकाश के अभाव के कारण, उन्होंने यूरेनियम लवण को काले कागज़ में लपेट कर अलमारी के अंदर एक फोटोग्राफिक प्लेट के पास अंधेरे में रख दिया। कुछ दिनों बाद जब उस फोटोग्राफिक प्लेट को निकाला गया और उसका विकास किया, तो उन्हें प्लेट पर धब्बे दिखे। उन्होंने समान प्रयोग को दोहराया। उन्होंने यूरेनियम लवण को फोटोग्राफिक प्लेट पर रखा और उसे अंधेरे स्थान पर रख दिया। इस बार भी फोटोग्राफिक प्लेट पर यूरेनियम लवण का प्रभाव धब्बों के रूप में दिखाई दिया। यूरेनियम के भिन्न-भिन्न लवणों को लेकर परीक्षण करने के बाद उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि सूर्य के प्रकाश के बिना भी यूरेनियम द्वारा ऐसी किरणें उत्सर्जित होती हैं, जो फ़ोटोग्राफ़िक प्लेटों को प्रभावित कर सकती हैं। यह घटना, रेडियोधर्मिता (रेडियोएक्टिविटी) की खोज मानी जाती है। परंतु, उस समय यह ज्ञात नहीं था कि इन रहस्यमय किरणों का संबंध परमाणु के नाभिक से है।

आने वाले वर्षों में ऐसे पदार्थों की खोज जारी रही और प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले विकिरणशील पदार्थों पर अध्ययन भी चलता रहा। वर्ष 1899 में वैज्ञानिक अर्नेस्ट रदरफोर्ड ने इन विकिरणों की अल्फा (α) और बीटा (β)

कणों के रूप में पहचान की और उन्हें नाम दिया। वर्ष 1911 में, जब वैज्ञानिक अर्नेस्ट रदरफोर्ड ने अपने सहयोगियों, गीगर (जोहान्स विल्हेम हेंस गीगर) एवं मार्स्डेन (सर अर्नेस्ट मार्सडेन) के साथ मिलकर धनावेशित अल्फा किरणपुंज को एक पतली सोने की पन्नी पर डालकर प्रकीर्णित अल्फा कणों का अध्ययन किया तो अप्रत्याशित परिणाम प्राप्त हुए। अधिकांश अल्फा कण बिना किसी विचलन के ही सोने की पन्नी के पार हो गए, जबकि कुछ अल्फा कण बड़े कोणीय मान पर विचलित हुए। लगभग हज़ारों कणों में से एक कण अत्यधिक विचलन के साथ लगभग विपरीत दिशा में लौट आया। प्रयोग को अनेक बार दोहराने पर भी इस अवलोकन में कोई बदलाव नहीं हुआ। यह आश्चर्यजनक था क्योंकि सोने की परत ठोस लग रही थी, फिर भी अधिकांश अल्फा कण बिना किसी विचलन के पार हो गए। रदरफोर्ड और भी अधिक हैरान थे क्योंकि कुछ कण अप्रत्याशित रूप से किरण भेजने की दिशा में वापस लौट आए। स्वयं रदरफोर्ड के शब्दों में यह घटना ऐसी थी, 'मानो आपने 15 इंच का तोप का गोला किसी टिशू पेपर पर दागा हो और वह लौटकर आपको ही लग गया हो।' इस अवलोकन के आधार पर रदरफोर्ड ने परमाणु का एक नया मॉडल प्रस्तावित किया। उन्होंने बताया कि परमाणु का सम्पूर्ण धनावेश और अधिकांश द्रव्यमान परमाणु के भीतरी भाग में एक अत्यंत छोटे से क्षेत्र में सघन रूप से केंद्रित होता है, जिसे उन्होंने नाभिक (न्यूक्लियस) नाम दिया। इसी के साथ 'नाभिकीय भौतिकी' का भी जन्म हुआ।

कालान्तर में, जब कण त्वरकों का विकास हुआ और इन त्वरकों से प्राप्त उच्च-ऊर्जा कणों (प्रक्षेप्य) को विभिन्न पदार्थों के नाभिकों (लक्ष्य) पर प्रक्षेपित किया गया, तो लक्ष्य अथवा प्रक्षेप्य से अलग विभिन्न नए तत्वों का निर्माण हुआ, जिनमें से कुछ विकिरण उत्सर्जित करने वाले थे। रहस्यमय नाभिक को समझने के प्रयास में वैज्ञानिकों ने त्वरकों (एक्सिलिरेटरों), संसूचकों (डिटेक्टर्स) एवं अनेक उन्नत तकनीकों का विकास किया। प्रख्यात वैज्ञानिक नील्स बोहर ने परमाणु संरचना का एक नया मॉडल प्रस्तुत किया, जिसके अनुसार, इलेक्ट्रॉन परमाणु के नाभिक के चारों ओर निश्चित ऊर्जा स्तरों (कक्षाओं) में गतिशील रहते हैं। बोहर द्वारा दिए गए परमाण्वीय मॉडल से रदरफोर्ड का नाभिकीय परमाणु मॉडल संवर्धित हुआ। यूरेनियम से उत्सर्जित किरणें एवं अन्य तत्वों द्वारा विकिरण उत्सर्जन, अर्थात 'रेडियोधर्मिता' के प्रयोगों और इन मॉडलों के आधार पर इस बात की पुष्टि हुई कि रेडियोधर्मिता परमाणु के नाभिक से उत्पन्न होती है।

अब हम अपने पहले प्रश्न पर वापस आते हैं कि कौन से परमाणु नाभिक रेडियोधर्मी होते हैं? इस विषय को समझने के लिए भी ऐतिहासिक वर्णन की आवश्यकता है। वैज्ञानिक जॉर्जियो फिया ने आज से 90 वर्ष पहले, 1935 में तब तक ज्ञात 327 नाभिकों की पहली संग्रहीत सूची प्रकाशित की। इसमें उन्होंने, ऊर्ध्वाधर दिशा (वर्टिकल डायरेक्शन) में प्रोटॉन संख्या और क्षैतिज दिशा (हॉरिजॉन्टल डायरेक्शन) में न्यूट्रॉन संख्या को दिखाया। इस पहली सूची में अगले 85 वर्षों में जो विस्तार हुआ, उसे चित्र-1 में दिखाया गया है। काले रंग में दिखाए गए नाभिक स्थायी हैं। चित्र-1 से स्पष्ट है कि पहले नाभिकीय चार्ट में ज्ञात नाभिकों में से अधिकतर स्थायी थे। नाभिकीय भौतिकी के शोध यह दर्शाते हैं कि स्थायी नाभिक में न्यूट्रॉन और प्रोटॉन की संख्या में संतुलन आवश्यक है। स्थायी नाभिकों में, जिनकी प्रोटॉन या न्यूट्रॉन संख्या विशेष होती है, जैसे 2, 8, 20, 28, 50, 82 और 126, वे सामान्य नाभिकों की तुलना में और अधिक स्थायी होते हैं और मैजिक नाभिकों के रूप में जाने जाते हैं। चित्र-1 में मैजिक परमाणु नाभिकों को भी चिह्नित किया गया है।

यदि किसी नाभिक में प्रोटॉन (Z) और न्यूट्रॉन (N) का अनुपात स्थायी नाभिक संतुलन से बहुत अधिक या बहुत कम होता है, तो वह अस्थायी नाभिक हो जाता है और

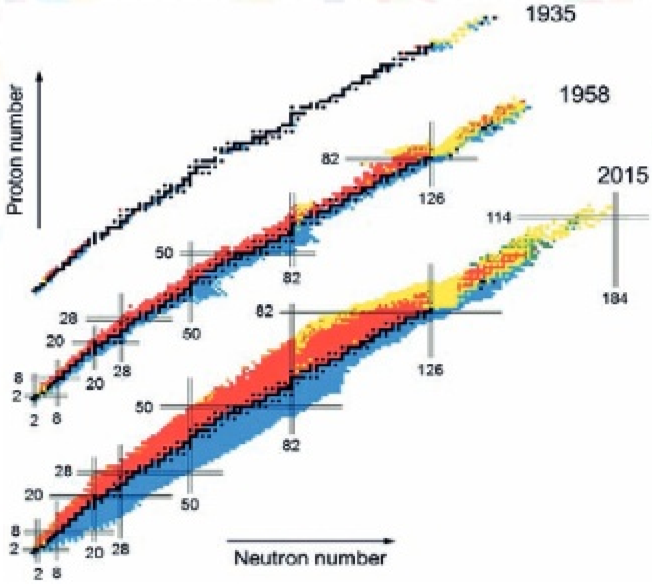

चित्र-1 नाभिकीय चार्ट नाभिकों को प्रोटॉन संख्या (Z) और न्यूट्रॉन संख्या (N) के अनुसार व्यवस्थित किया गया है। काला रंग स्थायी नाभिक दर्शाता है। अन्य रंग रेडियोधर्मी क्षय को दर्शाते हैं। लाल रंग वाले प्रोटॉन-समृद्ध नाभिक इलेक्ट्रॉन कैप्चर (EC) अथवा पॉज़िट्रॉन (बीटा-प्लस; β^+) क्षय करते हैं। नीले रंग वाले न्यूट्रॉन-समृद्ध नाभिक बीटा (β^-) क्षय करते हैं। पीले रंग वाले नाभिक अल्फा (α) विकिरण उत्सर्जक होते हैं। अंकित 'N' और 'Z' 'मैजिक नाभिक' को चिह्नित करते हैं। (चित्र-1 का ऑनलाइन स्रोत: https://link.springer.com/article/ 10.1140/epja/s10050-020-00046-7/figures/1).

अधिकांशतः विकिरण उत्सर्जन द्वारा अधिक स्थायी नाभिक में परिवर्तित होता है। ऐसे अस्थायी नाभिक ही रेडियोधर्मी नाभिक कहलाते हैं। चित्र-1 से स्पष्ट है कि काले रंग से चिह्नित स्थायी नाभिकों की संख्या अपेक्षाकृत कम है। वर्तमान में, लगभग 3300 से अधिक नाभिक ज्ञात हैं, जिनमें से अधिकतर रेडियोधर्मी हैं।

केवल कुछ ही रेडियोधर्मी नाभिक (रेडियोआइसोटोप) प्राकृतिक रूप से पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त, सभी रेडियोधर्मी नाभिक कृत्रिम रूप से परमाणु रिएक्टर या कण-त्वरकों (पार्टिकल एक्सिलिरेटरों) में उत्पन्न किए जाते हैं। इन रेडियोधर्मी नाभिकों की खोज के साथ ही, वैज्ञानिकों द्वारा उनका विस्तृत अध्ययन सतत जारी है और उनके गुणधर्मो का अध्ययन, उत्पादन तथा उनके अनुप्रयोग, अनुसंधान के महत्त्वपूर्ण विषय बने हुए हैं।

भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के संस्थापक एवं प्रमुख शिल्पकार डॉ. होमी जहाँगीर भाभा का मानना था कि परमाणु विज्ञान के क्षेत्र में उच्चस्तरीय अनुसंधान केवल बौद्धिक जिज्ञासा की पूर्ति के लिए ही नहीं, बल्कि देश के दीर्घकालिक तकनीकी एवं औद्योगिक विकास के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। उनकी इस दूरदर्शी सोच को साकार करने की दिशा में डॉ. राजा रामन्ना ने देश में एक विशाल साइक्लोट्रॉन (एक प्रकार का कण त्वरक) स्थापित करने की परिकल्पना की ताकि भारतीय वैज्ञानिक देश में ही उच्चस्तरीय अनुसंधान कर सकें और भारत अपने स्वयं के प्रशिक्षित, सक्षम और आत्मनिर्भर विशेषज्ञ तैयार कर सके। प्रख्यात खगोल-भौतिकज्ञ डॉ. मेघनाद साहा ने 1930 के दशक के उत्तरार्ध और 1940 के दशक में भारत में साइक्लोट्रॉन-आधारित अनुसंधान सुविधा स्थापित करने की परिकल्पना एवं और इसकी आवश्यकता का उल्लेख किया है । इस महत्वाकांक्षी विचार को मूर्त रूप देने के लिए साइक्लोट्रॉन निर्माण के प्रारंभिक एवं अग्रणी प्रयास डॉ. बिधु भूषण नागचौधुरी ने किए। संभवतः इसी प्रयास को आगे बढ़ाते हुए, डॉ. राजा रामन्ना की अध्यक्षता वाली समिति की वर्ष 1964 की सिफारिशों तथा वर्ष 1965 में परमाणु ऊर्जा आयोग द्वारा साइक्लोट्रॉन (K-130) परियोजना को स्वीकृति दी गई। तत्पश्चात, वर्ष 1969 में, कोलकाता (तत्कालीन कलकत्ता) में साइक्लोट्रॉन की स्थापना की दिशा में कार्य प्रारंभ हुआ। उस समय साइक्लोट्रॉन निर्माण की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आवश्यक तकनीकी आधारभूत संरचना भारत में उपलब्ध नहीं थी। 16 जून 1977 को परिवर्ती ऊर्जा साइक्लोट्रॉन केंद्र (वेरिएबल एनर्जी साइक्लोट्रॉन सेंटर, VECC), कोलकाता में प्रथम स्वदेशी साइक्लोट्रॉन की स्थापना हुई। इसे, K-130 कक्ष-ताप साइक्लोट्रॉन (रूम टेम्प्रेचर साइक्लोट्रॉन; RTC) के नाम से भी जाना जाता है। वैज्ञानिकों के असाधारण परिश्रम एवं संघर्ष से परियोजना के दौरान आई अनेक कठिनाइयों को दूर किया गया। आरंभिक वर्षों में इस सुविधा से केवल हाइड्रोजन, ड्यूटेरॉन और अल्फा कणपुंजों को ही प्राप्त किया

जा सका। तत्पश्चात, भारी आयनों को त्वरित करने की सुविधा भी विकसित की गई। वर्तमान में, यह त्वरक विभिन्न विकिरणों को उपलब्ध कराने में सक्षम है, जिनमें प्रोटॉन (ऊर्जा परास: 7 से 15 MeV), ड्यूटेरॉन (ऊर्जा परास: 14 से 25 MeV), अल्फा कण (ऊर्जा परास: 26 से 55 MeV) तथा भारी आयन किरणें (ऊर्जा परास: 7 से 10 MeV) शामिल हैं।

कठिन चुनौतियों के बावजूद, K-130 साइक्लोट्रॉन की सफलता ने वैज्ञानिकों एवं अभियंताओं का मनोबल बढ़ाया और उन्हें अतिचालक साइक्लोट्रॉन (सुपरकंडक्टिंग साइक्लोट्रॉन) जैसी अधिक चुनौतीपूर्ण परियोजना हेतु प्रेरित किया। बारह वर्षों के समर्पित प्रयासों के बाद, 25 अगस्त 2009 को प्रातः 4 बजे सुपरकंडक्टिंग साइक्लोट्रॉन में पहली बार आंतरिक किरण (इंटरनल बीम) का सफलतापूर्वक अवलोकन किया गया। सुपरकंडक्टिंग साइक्लोट्रॉन से पहली बाह्य किरण नाइट्रोजन-1 4 आयनों (ऊर्जा 252 MeV) के रूप में प्राप्त की गई। वर्तमान में, यह साइक्लोट्रॉन नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, आर्गन और क्रिप्टॉन आयनों को विभिन्न आवेश अवस्थाओं में त्वरित कर, उनकी किरणें अनुसंधान हेतु उपलब्ध करा रहा है।

इन दो साइक्लोट्रॉनों से प्राप्त आवेशित त्वरित कणों को विभिन्न लक्ष्यों पर प्रक्षेपित कर, नाभिकीय अभिक्रिया द्वारा, स्थायित्व-रेखा के प्रोटॉन-समृद्ध पक्ष के समस्थानिकों का उत्पादन किया जाता है। साइक्लोट्रॉन से प्राप्त किरण के प्रकार, उसकी ऊर्जा तथा लक्ष्य नाभिक के आधार पर विभिन्न रेडियोधर्मी समस्थानिकों का उत्पादन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, सुपरकंडक्टिंग साइक्लोट्रॉन (SCC) से प्राप्त 231 MeV ऊर्जा के नाइट्रोजन कणों को रोडियम (^{103}Rh) लक्ष्य पर प्रेरित नाभिकीय अभिक्रिया के लगभग एक घंटे के बाद, उपस्थित रेडियोधर्मी नाभिकों में ^{104}Cd, ^{103}Ag, ^{104}Ag, ^{105}Ag, ^{99}Pd, ^{100}Pd, ^{101}Pd, ^{97}Rh, ^{99}Rh, ^{101}Rh, ^{95}Ru, ^{97}Ru, ^{94}Tc, ^{95}Tc, ^{97}Tc, इत्यादि शामिल हैं। साइक्लोट्रॉन द्वारा उत्पादित रेडियोधर्मी नाभिकों के गुणधर्मों को समझने और उनके व्यवहार का गहन अध्ययन करने के लिए वी.ई.सी.सी. कोलकाता में उन्नत एवं अत्याधुनिक संसूचकों (डिटेक्टरों) का विकास किया गया है और ऐसे दो संसूचकों (डिटेक्टरों) को चित्र-2 में दर्शाया गया है। वी. ई. सी. सी. में रेडियोधर्मी आयन कणपुंज (रेडियोएक्टिव आयन बीम; RIB) सुविधा भी उपलब्ध है, जहाँ कक्ष-तापीय साइक्लोट्रॉन में नाभिकीय अभिक्रियाओं के फलस्वरूप उत्पन्न रेडियोधर्मी नाभिकों

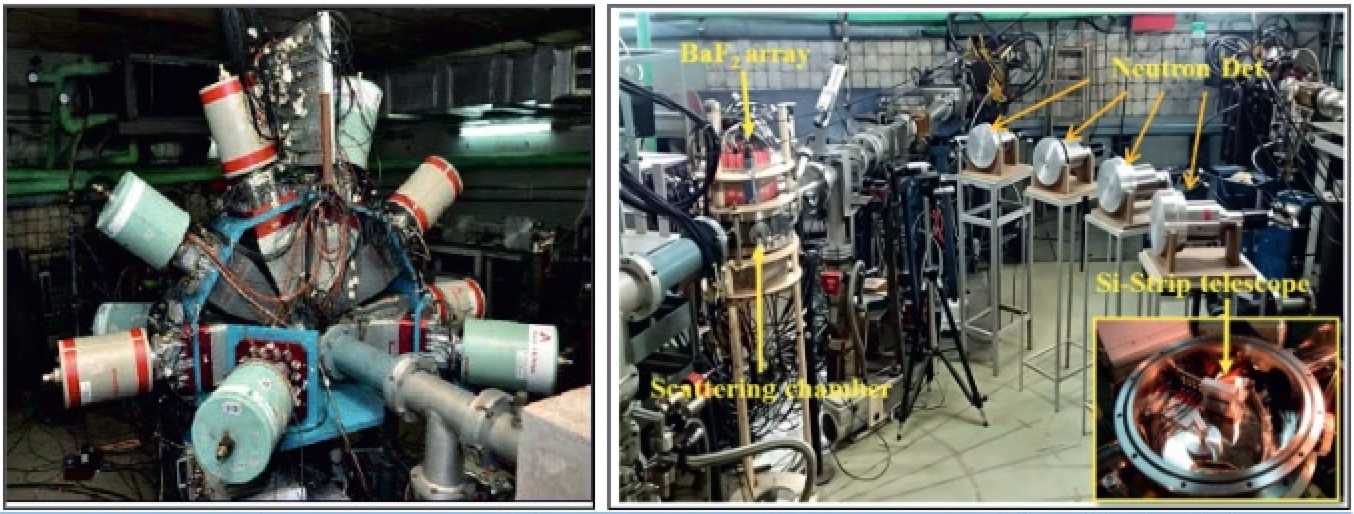

चित्र-2 (बाएं) क्लोवर (CLOVER) एवं LEPS डिटेक्टरों सहित INGA सरणी (ऐरे), (दाएं) BaF_2सरणी (ऐरे), न्यूट्रॉन डिटेक्टरों और सिलिकॉन (Si)-स्ट्रिप टेलीस्कोप युक्त प्रायोगिक सुविधा

को पुनः त्वरित कर कणपुंज के रूप में प्रयोगों के लिए उपयोग में लाया जाता है।

रेडियोसमस्थानिकों के विज्ञान, चिकित्सा, उद्योग तथा कृषि सहित विभिन्न क्षेत्रों में अनेक महत्त्वपूर्ण अनुप्रयोग हैं। इन्हें ध्यान में रखते हुए, वी.ई.सी.सी. के अंतर्गत चिकित्सकीय साइक्लोट्रॉन (मेडिकल साइक्लोट्रॉन) कार्यक्रम शुरू हुआ। 18 सितंबर 2018 को, वी.ई.सी.सी. में 30 MeV क्षमता के मेडिकल साइक्लोट्रॉन का परिचालन शुरू हुआ। चित्र-3 में कोलकाता स्थित साइक्लोन-30 साइक्लोट्रॉन दिखाया गया है। इसके द्वारा फ्लुओरो-डीऑक्सीग्लूकोज़ (^{18}F-FDG) रेडियोभेषज (रेडियो-फार्मास्यूटिकल) का उत्पादन किया जाता है और कैंसर की पहचान एवं कैंसर रोगियों के निदानात्मक परीक्षणों के लिए नियमित रूप से निकटवर्ती अस्पतालों तक पहुँचाया जाता है। इसके अतिरिक्त, नए रेडियोसमस्थानिकों के उत्पादन, रसायनिक प्रसंस्करण तकनीकों तथा उन्नत उत्पादन विधियों को विकसित किया जा रहा है। इन प्रयासों से ^{68}Ge/^{68}Ga जनित्र (जनरेटर) तथा थैलियम (^{201}Tl) के उत्पादन में सफलता प्राप्त हुई है।

चित्र-3 VECC कोलकाता (चाकगड़िया परिसर) में स्थित चिकित्सकीय साइक्लोट्रॉन (Cyclone 30)

भारत में अधिकतम रेडियोसमस्थानिकों की आपूर्ति परमाणु ऊर्जा विभाग द्वारा की जाती है। विभिन्न रेडियोसमस्थानिक जैसे कि, टेक्नीशियम (^{99m}Tc), आयोडीन (^{131}I), कोबाल्ट (^{60}Co), फ्लोरीन (^{18}F), कार्बन (^{14}C), सीज़ियम (^{137}Cs), इत्यादि परमाणु ऊर्जा विभाग की इकाइयों में उत्पादित होते हैं। नाभिकीय रिएक्टरों में न्यूट्रॉन-समृद्ध समस्थानिक और साइक्लोट्रॉनों में प्रोटॉन-समृद्ध समस्थानिक उत्पन्न किए जाते हैं। वर्तमान में, 23 चिकित्सकीय साइक्लोट्रॉन कैंसर निदान एवं उपचार हेतु उपयोग में आने वाले रेडियोसमस्थानिकों का उत्पादन कर रहे हैं। रेडियोसमस्थानिकों की भविष्य में बढ़ती मांग को ध्यान में रखते हुए, विभिन्न प्रगत अनुसंधान एवं आइसोटोप उत्पादन रिएक्टरों का विकास किया जा रहा है। नए समस्थानिकों की खोज एवं उनके उत्पादन से संबंधित अध्ययन, रसायनिक प्रसंस्करण तकनीकों, रेडियोधर्मियों के मानव कल्याण हेतु शांतिपूर्ण उपयोग, विभाग में किए जा रहे अनुसंधान एवं विकास कार्यों का एक प्रमुख विषय है।

लेखिका का परिचय

डॉ. (श्रीमती) पर्णिका दास

डॉ. (श्रीमती) पर्णिका दास वर्तमान में, परमाणु ऊर्जा विभाग के कोलकाता स्थित परिवर्ती ऊर्जा साइक्लोट्रॉन केंद्र (वीईसीसी) में अध्यक्ष, निम्न तापीय ट्रैप एवं नाभिकीय स्पेक्ट्रोस्कोपी अनुभाग तथा डीन, अकादमिक, भौतिकी विज्ञान, होमी भाभा राष्ट्रीय संस्थान के पद पर कार्यरत हैं।

विकिरण से नवाचार - कृषि क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन

डॉ. बिक्रम किशोर दास

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

कृषि नवाचार में विकिरण का जादू

कृषि मानव जीवन का आधार है और इसकी निरंतर प्रगति ही समाज की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करती है। पिछले कुछ दशकों में विज्ञान ने कृषि को केवल परंपरागत खेती से उठाकर आधुनिक तकनीकी खेती तक पहुँचाया है। इस क्रम में, विकिरण ने एक क्रांतिकारी भूमिका निभाई है। यद्यपि विकिरण शब्द आम जनता के बीच अक्सर परमाणु ऊर्जा से जुड़ा माना जाता है, परंतु इसका कृषि में भी व्यापक एवं सकारात्मक योगदान है। बढ़ती हुई जनसंख्या की वजह से कृषि उत्पादन की मांग 50-70% से बढ़ने की संभावना है। साथ ही जलवायु परिवर्तन की वजह से कृषि के तरीकों में नई मुश्किलें उभरकर आ रही हैं। कृषि क्षेत्र में विकिरण का प्रयोग म्यूटेशन ब्रीडिंग, स्टेराइल इंसेक्ट तकनीक (SIT), रेडियो ट्रेसर तकनीक शामिल हैं। इन तकनीकों ने न केवल उत्पादन बढ़ाने में योगदान दिया है बल्कि पर्यावरण-अनुकूल और टिकाऊ कृषि के नए रास्ते भी खोले हैं।

म्यूटेशन ब्रीडिंग (उत्परिवर्तन प्रजनन) क्या है?

म्यूटेशन या उत्परिवर्तन जीवों के आनुवंशिक कोड (डीएनए अनुक्रम) में वंशानुगत परिवर्तन है। प्राकृतिक और प्रेरित दोनों प्रकार के म्यूटेशन फसलों में आनुवंशिक विविधता का आधार बनते हैं। प्राकृतिक रूप से यह प्रक्रिया अत्यंत धीमी होती है, पर विकिरण द्वारा इसे तीव्र किया जा सकता है। विकिरण जनित म्यूटेशन ब्रीडिंग का अर्थ बीजों या पौधों में विकिरण से म्यूटेशन उत्पन्न करना है।

चित्र-1 कृषि के क्षेत्र में परमाणु ऊर्जा का महत्त्व

लाभ

1. नई किस्मों का कम समय में विकास
2. उच्च उपज, रोग प्रतिरोधक, गुणवत्तापूर्ण और पर्यावरणीय तनाव सहनशीलता वाली फसल की किस्में
3. जननद्रव्य (जर्मप्लाज्म) में विविधता लाना, जिससे प्रजनन वैज्ञानिकों को नए विकल्प मिलते हैं जैसे- सूखा, रोग, खारी मिट्टी प्रतिरोधक, पोषण-संवर्धित, आदि

वर्ष 1927 में जे. हर्बर्ट मुलर द्वारा X-किरणों से उत्परिवर्तन की खोज के बाद से ही, यह कृषि सुधार की अभूतपूर्व धारा बन गई। पहली व्यावसायिक म्यूटेन्ट किस्म 1934 में तंबाकू के लिए विकसित की गई थी। अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (IAEA) के अनुसार अब तक विश्व में 3700 से अधिक म्यूटेन्ट किस्में विकसित की गई हैं।

भारत में, इस तकनीक का अनुसंधान 1950 के दशक में शुरू किया गया, और आज भारत इस क्षेत्र के अग्रणी देशों में से एक है। भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में बीजों पर विकिरण के प्रभाव पर अग्रणीय शोध किया जाता है। यहाँ राज्य कृषि विश्वविद्यालय एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के सहयोग से अब तक अनाज, दालों, तिलहन आदि फसलों में 72 उन्नत किस्में विकसित की गईं हैं। वनस्पति जनित फसलें जैसे केला और फूलों में आयनकारी विकिरण के प्रभावों का अध्ययन किया जा रहा है। पारंपरिक गामा और एक्स-रे किरणों के अलावा अब, न्यूट्रॉन, भारी आयन बीम जैसी विकिरण तकनीकों का प्रयोग कर लाभकारक म्यूटेशन भी किया जा रहा है।

कई देशों में अंतरिक्ष-प्रजनन (स्पेस-ब्रीडिंग) का भी प्रयोग किया जा रहा है। इसमें बीजों को अंतरिक्ष स्टेशन या बायोसैटेलाइट आदि में सूक्ष्म गुरुत्वाकर्षण (माइक्रोग्रैविटी) और उच्च विकिरण के संपर्क में लाकर पृथ्वी पर लाया जाता है। इससे बीजों के डीएनए में म्यूटेशन होता है। स्पेस विकिरण से सूरजमुखी, कपास, गेहूं, चावल, टमाटर, सोयाबीन, मूंगफली समेत 200 से अधिक उन्नत किस्में विकसित की गई हैं।

ट्रॉम्बे की उन्नत फसल किस्में - विकिरण विज्ञान से खेतों तक समृद्धि की कहानी

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र द्वारा म्यूटेशन ब्रीडिंग एवं अन्य तकनीकों के माध्यम से विकसित की गई उन्नत फसल किस्में इसी दिशा में एक उल्लेखनीय उपलब्धि है। इन किस्मों ने देश के विभिन्न राज्यों में किसानों को अधिक उपज, रोग प्रतिरोधक फसलें और बेहतर गुणवत्ता प्रदान की है (चित्र-2)।

चित्र -2 ट्रॉम्बे की उन्नत फसल किस्में और उनका फसल-वार योगदान

अनाज फसलों में प्रगति

धान भारत की खाद्य सुरक्षा की आधारभूत फसल है। भारतीय धान सुधार कार्यक्रम में भा.प.अ.के., ट्रॉम्बे की भूमिका उल्लेखनीय रही है। विकिरण-आधारित म्यूटेशन ब्रीडिंग द्वारा विकसित धान की उन्नत किस्मों ने उत्पादन बढ़ाने के साथ-साथ सुगंध, स्वाद और गुणवत्ता जैसे पारंपरिक गुणों को भी संरक्षित रखा है। इन किस्मों में अर्ध-बौना एवं गिरने से प्रतिरोधी पौधा प्रकार, उच्च उपज, बेहतर मिलिंग गुणवत्ता तथा अधिक हेड राइस रिकवरी जैसे गुण पाए जाते हैं। टीसीडीएम-1, सीजीजेटी और टीसीवीएम में सुगंधित दाने, टीकेआर-कोलम में सुपरफाइन एवं स्वादिष्ट दाने, जबकि विक्रम-टीसीआर अधिक उपज के साथ इसके दाने मुरमुरा निर्माण के लिए विशेष रूप से उपयुक्त हैं। मोटे

अनाजों में ज्वार की आरटीएस-43 किस्म उल्लेखनीय है। यह जल्दी फूलने और एक साथ पकने वाली किस्म है, जिसके दाने सफेद, चमकदार और रोटी बनाने के लिए उपयुक्त हैं। इसकी 'स्टे-ग्रीन' विशेषता पौधे को लंबे समय तक हरा बनाए रखती है, जिससे सूखे की स्थिति में भी उत्पादन स्थिर रहता है। आज जब मोटे अनाजों को 'श्रीअन्न' के रूप में बढ़ावा दिया जा रहा है, ऐसी किस्में पोषण सुरक्षा और जलवायु-अनुकूल खेती दोनों के लिए उपयोगी हैं (चित्र -3)।

दलहनी फसलें - प्रोटीन सुरक्षा की दिशा में कदम

भारत में दालें पोषण का प्रमुख स्रोत हैं। भा.प.अ. केंद्र की विकसित अरहर किस्में टीजेटी-501, टीटी-401 और पीकेवी-तारा-शीघ्र पकने वाली, अधिक उपज देने वाली तथा रोग प्रतिरोधक हैं। उड़द की किस्में टीएआरएम-1, टीएआरएम-2, टीजेएम-3 और टीएमबी-37 पाउडरी मिल्ड्यू तथा येलोमोज़ेक वायरस जैसी बीमारियों के प्रति सहनशील हैं। इसी प्रकार, मूंग में भी उन्नत किस्में विकसित की गई हैं। इन किस्मों से किसानों को बेहतर उत्पादन के साथ पौष्टिक आहार की उपलब्धता भी सुनिश्चित होती है (चित्र -3)।

तिलहनी फसलें - पोषण और आर्थिक समृद्धि

तिलहनी फसलों में भा.प.अ. केंद्र की उपलब्धियाँ प्रेरणादायक हैं। इसके बड़े दाने और अधिक उपज किसानों के लिए लाभकारी हैं। मूंगफली में भा.प.अ. केंद्र, ट्रॉम्बे की पहली उत्परिवर्तित किस्म टीजी -1 (1973) थी, जिसने बड़े दानों की विशेषता प्रदान कर आगे विकसित अनेक किस्मों

चित्र -3 प्रतिनिधिक ट्रॉम्बे म्यूटेंट किस्में-उच्च उपज एवं बेहतर गुणवत्ता सहित

की नींव रखी। इसके बाद, टीजी-3, टीजी-17, टीकेजी-19ए, टीजी-22 तथा नवीन टीजी-73 जैसी किस्में विकसित की गईं, जिनमें बड़े दाने, शीघ्र परिपक्वता, सूखा सहनशीलता, उच्च उपज तथा विभिन्न फसल प्रणालियों के लिए उपयुक्तता जैसे महत्वपूर्ण गुण सम्मिलित हैं। सरसों में भा.प.अ. केंद्र द्वारा विकसित ट्रॉम्बे मस्टर्ड-1 (टीएम -1) भारत की पहली पीले बीजावरण वाली उत्परिवर्तित किस्म है। इसके बाद, विकसित टीपीएम -1 महाराष्ट्र के लिए उच्च उपज तथा कम एरूसिक अम्ल वाली किस्म के रूप में जारी की गई, जबकि टीएम -2 और टीएम -4 असम के लिए कम ऊँचाई, सघन फलियों एवं बेहतर उत्पादन क्षमता वाली किस्में हैं। तिल की टीएलटी -10 किस्म सफेद दानों वाली, अधिक उपज देने वाली तथा दोनों मौसमों में उपयुक्त है (चित्र -3)।

फल फसलों में उपलब्धि - कावेरी वामन केला

फल फसलों में 'कावेरी वामन (टीबीएम-9)' एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। यह ग्रैंड नैन केले की विकिरण प्रेरित बौनी किस्म है, जिसे भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद - राष्ट्रीय केला अनुसंधान केंद्र, तिरुचिरापल्ली के सहयोग से विकसित किया गया। इसकी ऊँचाई लगभग 150-160 सेंटीमीटर होती है, जिससे इसे अधिक सघन रोपण और छतों या छोटे बागानों में भी उगाया जा सकता है। भारी वर्षा और तेज़ हवा जैसी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी यह पौधा मज़बूत बना रहता है (चित्र -3)।

ज़मीनी स्तर पर किसानों से संवाद और तकनीक का प्रसार

कृषि अनुसंधान तभी सफल माना जाता है जब उसकी उपलब्धियाँ सीधे किसानों के खेतों तक पहुँचें। इसी उद्देश्य से भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ट्रॉम्बे द्वारा विभिन्न राज्यों में समय-समय पर 'फील्ड डे' तथा बीज किट वितरण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। 'फील्ड डे' का मुख्य उद्देश्य किसानों को खेत पर ही उन्नत किस्मों की वास्तविक क्षमता से परिचित कराना है। इन कार्यक्रमों में किसान स्वयं फसलों की वृद्धि, रोग प्रतिरोधक क्षमता, अधिक उपज तथा जलवायु सहनशीलता जैसे गुणों को प्रत्यक्ष रूप से देखते हैं। इससे वैज्ञानिकों और किसानों के बीच सीधा संवाद स्थापित होता है तथा नई तकनीकों के प्रति विश्वास बढ़ता है। इसी प्रकार, बीज किट वितरण कार्यक्रमों के माध्यम से किसानों को समय पर उच्च गुणवत्ता वाले प्रमाणित बीज उपलब्ध कराए जाते हैं, ताकि वे नई उन्नत किस्मों को अपनाकर अपनी कृषि उत्पादकता और आय में वृद्धि कर सकें (चित्र -4)।

चित्र -4 वैज्ञानिकों और किसानों का साथ, प्रगति की नई बात

स्टेराइल इंसेक्ट तकनीक (SIT) - कीट नियंत्रण की पर्यावरण-अनुकूल विधि

SIT विकिरण आधारित कीट नियंत्रण का पर्यावरण-सम्मत तरीका है। इसमें नर कीटों को विकिरण द्वारा बाँझ बना दिया जाता है। जब इन नर कीटों को प्राकृतिक वातावरण में छोड़ा जाता है, तो ये मादा कीटों के साथ संयोग तो करते हैं परंतु अंडे निष्फल रह जाते हैं। परिणामस्वरूप, समय के साथ कीटों की संख्या घटने लगती है।

विशेषताएँ

- कीटों की आबादी में कमी (बिना रसायनिक कीटनाशकों के)
- पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं
- विशिष्ट कीटों पर लक्षित तकनीक

भारत में, इसका प्रयोग मुख्यतः लाल पाम वीविल, आलू कंद कीट, धान तना छेदक, कपास बॉलवर्म, लाल कपास कीट तथा डायमंड बैक मॉथ पर किया गया है। यह तकनीक भविष्य में बड़े पैमाने पर कीटनाशकों की निर्भरता घटा सकती है (चित्र -5)।

रेडियो ट्रेसर तकनीक - पोषक तत्वों का विज्ञान

रेडियोट्रेसर, फॉस्फोरस, नाइट्रोजन, सल्फर, पोटैशियम आदि के रेडियोआइसोटोप (P-32, N-15, S-35, K-42) होते हैं जिनका प्रयोग पौधों, मिट्टी और जल के बीच होने वाले पोषक तत्वों के प्रवाह का अध्ययन करने के लिए किया जाता है। रेडियोआइसोटोप ट्रेसर्स को खाद या पानी में मिलाया जाता है और फिर पौधों में पोषक तत्वों का स्थानांतरण, उर्वरक की कुशलता, जड़ विकास, पानी की आवा-जाही, समन्वित पोषक तत्व का अध्ययन किया जाता है (चित्र -5)।

लाभ

- **उर्वरक कुशलता** - रेडियोट्रेसर से खाद का पौधों में प्रवेश और वातावरण में नुकसान को ट्रेस किया जाता है।
- **जड़ प्रणाली का विश्लेषण** - रेडियो ट्रेसर डालकर यह

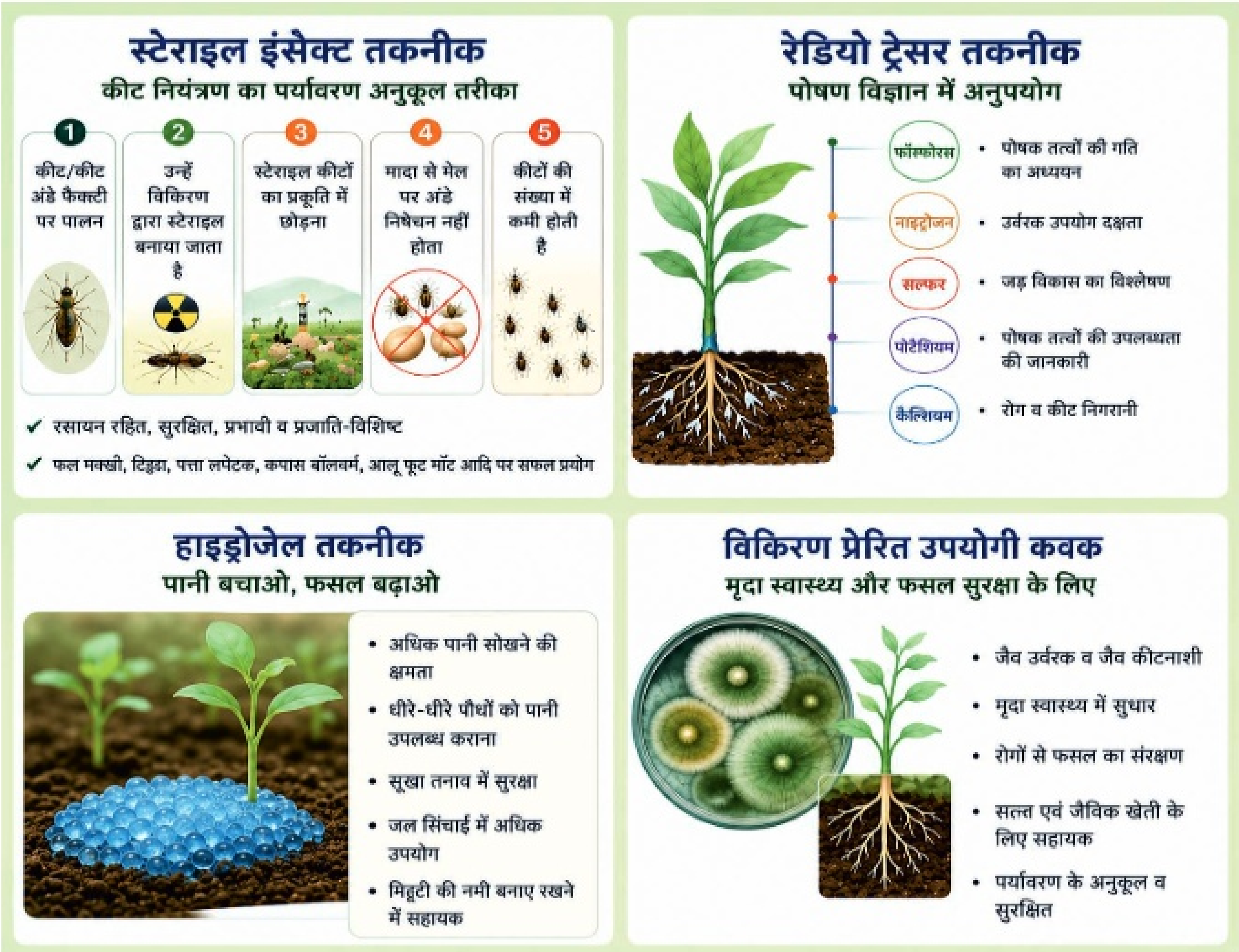

चित्र -5 विकिरण आधारित उन्नत कृषि तकनीकें फसल उत्पादन बढ़ाने, संसाधनों के बेहतर उपयोग और किसानों की समृद्धि में योगदान

अध्ययन संभव हुआ है कि पौधों की जड़ें किस दिशा और गहराई तक फैलती हैं।

- **पत्तियों और तनों में पोषक तत्वों की गति** - स्प्रे के ज़रिये पोषक तत्वों का सटीक वितरण
- **संक्रमण और रोगों का अध्ययन** - जड़ों को नुकसान पहुँचाने वाले कीटों या रोगों की निगरानी

अन्य कृषि-तकनीकें

- **विकिरण से विकसित हाइड्रोजेल** – अधिक पानी सोखकर धीरे-धीरे छोड़ता है, जिससे पौधों को सूखा तनाव से बचाव मिलता है। (चित्र -4)
- **विकिरण प्रेरित ट्राइकोडर्माविरेन्स** – जैविक बीज उपचार हेतु प्रभावी जैवनियंत्रक (बायोकंट्रोल एजेंट)(चित्र -4)
- **गामा-किरण आधारित 'अनु-चैतन्य'** – पौधा वृद्धि प्रोत्साहक, जो उपज और ताक़त बढ़ाता है।

विज्ञान और खेती का प्रेरणादायक संगम

ट्रॉम्बे फसल किस्में एवं कृषि प्रौद्योगिकियाँ आज देश के विभिन्न राज्यों में व्यावसायिक खेती के लिए व्यापक रूप से अपनाई जा रही हैं। ये उपलब्धियाँ केवल उत्पादन वृद्धि तक सीमित नहीं हैं, बल्कि पोषण गुणवत्ता, रोग प्रतिरोधकता तथा जलवायु सहनशीलता जैसे महत्वपूर्ण गुणों को भी सुदृढ़ बनाती हैं। यह उपलब्धि दर्शाती है कि परमाणु विज्ञान का शांतिपूर्ण उपयोग समाज के कल्याण और खाद्य सुरक्षा में कितना महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है। विकिरण आधारित अनुसंधान केवल प्रयोगात्मक विज्ञान नहीं, बल्कि किसानों की, देश की व्यावहारिक समस्याओं का समाधान भी है। विद्यार्थियों के लिए यह विषय विशेष प्रेरणा का स्रोत है, क्योंकि यह दिखाता है कि प्रयोगशाला में विकसित तकनीकें सीधे किसानों के खेतों और लोगों की थाली तक पहुँचती हैं। आने वाले समय में विकिरण-आधारित कृषि अनुसंधान भारत की टिकाऊ, पोषण-समृद्ध और जलवायु-अनुकूल खेती को नई दिशा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

लेखक का परिचय

डॉ. बिक्रम किशोर दास

डॉ. बिक्रम किशोर दास वर्तमान में, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई के नाभिकीय कृषि एवं जैव-प्रौद्योगिकी प्रभाग में वैज्ञानिक अधिकारी-एच के पद पर कार्यरत हैं।

"भौतिकी से मुझे बड़ा लगाव है। मैं जानता हूँ कि मैं इसमें शानदार कार्य करूँगा।"

- भौतिकी को करियर बनाने के विषय में भाभा के अपने पिता को लिखे पत्र का अंश

असाध्य रोगों का उपचार - लो-डोज़ रेडिएशन थेरेपी

डॉ. उषा यादव

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

क्या होगा यदि विकिरण, यानि रेडिएशन, जो थोड़ी डरावनी लगती है, वास्तव में लोगों को बेहतर महसूस करने में मदद करें?

क्या आप जानते हैं कि कोविड-19 के इलाज के लिए 'लो-डोज़ रेडिएशन थेरेपी' का परीक्षण किया गया था?

वैज्ञानिक, लो-डोज़ रेडिएशन थेरेपी (एल.डी.आर.टी. LDRT) नामक विशेष उपचार विधि पर खोज कर रहे हैं, जो कैंसर के साथ-साथ कई अन्य बीमारियों, कष्टदायक जोड़ों के रोग, अस्थि रोग सूजन एवं दर्द, फेफड़ों के संक्रमण (निमोनिया), इत्यादि के इलाज में मदद करने के लिए अत्यल्प मात्रा में विकिरण का उपयोग करती है।

आइए विकिरण को जानें - यह खतरनाक नहीं, बल्कि लाभदायक !!

इस लेख में, हम आपको बताएँगे कि...

- विकिरण क्या है?
- एल.डी.आर.टी. क्या है? और यह कैसे काम करती है?
- पूर्व में, इसका उपयोग कहाँ किया गया है?
- वर्तमान में, एल.डी.आर.टी. का क्या महत्व है?
- कोविड-19 के एल.डी.आर.टी. परीक्षणों से हमनें क्या सीखा?
- क्या 'एल डी आर टी' सुरक्षित है?

विकिरण क्या है ?

एल.डी.आर.टी. को समझने से पहले, आइए विकिरण को समझें।

विकिरण ऊर्जावान फोटॉन या कण या विद्युत-चुम्बकीय अथवा अन्य किरणे हैं जो अंतरिक्ष एवं पदार्थों (ठोस, द्रव, गैस) को भेद सकती हैं। यह सूर्य, माइक्रोवेव, एक्स किरणों (एक्स-रे), इत्यादि स्रोतों से और यहां तक कि आपके मोबाइल फोन से भी (हालांकि अत्यल्प मात्रा में) आ सकती हैं। चिकित्सा के क्षेत्र में, इन विकिरणों का उपयोग आमतौर पर बिना किसी चीर-फाड़ के, रोगों का निदान एवं उपचार के लिए निम्नानुसार किया जाता है :-

1. **नैदानिक उपयोग:** शरीर के भीतरी अंगों के प्रतिबिंबन के लिए (जैसे एक्स-रे, अल्ट्रासाउंड, इत्यादि) न्यूनतम संभव मात्रा में विकिरण का उपयोग किया जाता है।
2. **चिकित्सीय उपयोग:** विकिरण की उपयुक्त मात्रा (डोज़) के उपयोग से कैंसर कोशिकाओं को नष्ट कर कैंसर का उपचार किया जाता है।

एल.डी.आर.टी. क्या है ? कैसे काम करती है ?

लो-डोज़ रेडिएशन थेरेपी जिसे संक्षेप में एल.डी.आर.टी'

कहते हैं, उपचार की ऐसी विधि है जिसमें बहुत कम मात्रा (डोज़) में विकिरण का उपयोग किया जाता है। आमतौर पर यह मात्रा 1 ग्रे (Gy) या उससे भी कम होती है, जो कैंसर के उपचार में सामान्यतया प्रयुक्त मात्रा (~60 Gy) से बहुत कम है। जहां कैंसर चिकित्सा में विकिरण कोशिकाओं को नष्ट करती है, एल.डी.आर.टी. में प्रयुक्त अत्यल्प मात्रा में यह शरीर की अतिसक्रिय प्रतिरक्षा प्रणाली को शांत करती है, खासकर जब यह शरीर में निमोनिया, प्रदाह (इन्फ्लेमेशन) जैसी समस्याएं पैदा कर रही हो। जब हम बीमार पड़ते हैं या चोटिल होते हैं, तो हमारा शरीर मदद के लिए श्वेत रक्त कोशिकाएँ भेजता है। लेकिन कभी-कभी, ये कोशिकाएँ आवश्यकता से अधिक काम करने लगती हैं और बहुत ज़्यादा जलन, सूजन, फेफड़ों में पानी, इत्यादि लक्षण दिखाई देते हैं। इससे स्वस्थ ऊतकों को नुकसान भी पहुँच सकता है। इसे इस प्रकार समझ सकते हैं कि मान लीजिए एल.डी.आर.टी. एक दमकल गाड़ी है जो आग बुझाकर जान-माल की सुरक्षा करती है, किंतु आग बुझाने के क्रम में, जब पानी की धार तेज़ प्रवाहित की जाती है तो यह स्थायी अवसंरचना को नुकसान पहुंचाने लगती है तब पानी की धार को नियंत्रित करना आवश्यक हो जाता है। एल.डी.आर.टी. भी दमकल के पानी की धार को नियंत्रित करने वाले यंत्र के समान काम करती है। जब विकिरण के प्रभाव से शरीर के स्वस्थ ऊतकों को नुकसान होने लगता है तब एल.डी.आर.टी. नुकसान को कम करती है।।

एल.डी.आर.टी. का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

यह वास्तव में अचंभित करने वाली बात लग सकती है कि एल.डी.आर.टी. कोई बिल्कुल नई विधि नहीं है। अतीत में भी, इसका उपयोग बड़े स्तर पर किया गया है। 1900 के दशक की शुरूआत में प्रति-जैविकों (एंटीबायोटिक्स) के आविष्कार से पहले चिकित्सक निमोनिया (फेफड़ों के संक्रमण) के उपचार के लिए एक्स-किरणों (एक्स-रे) की अल्प-मात्रा का उपयोग करते थे। 1940 के दशक में जब पेनिसिलिन जैसी एंटीबायोटिक्स उपलब्ध हुईं और तब औषधि लेना रेडिएशन मशीनों के इस्तेमाल से कहीं ज़्यादा आसान विकल्प बन गया। लगभग उसी दौरान विकिरण से होने वाले खतरनाक प्रभावों की खोज भी हुई। वर्ष 1945 में परमाणु बम विस्फोट के बाद काफी भय पैदा हुआ। कैंसर को छोड़कर, चिकित्सा के क्षेत्र में विकिरण का उपयोग बहुत कम हो गया था। लेकिन वर्तमान परिदृश्य बिलकुल अलग है। अब हम विकिरण के प्रभावों को और भी बेहतर ढंग से समझते हैं और नियंत्रित तरीके से अपने लाभ के लिए, विशेष रूप से तब जब कोई अन्य उपचार उपलब्ध न हो या कोई अन्य विकल्प लाभप्रद न हो रहा हो, इसका उपयोग कर सकते हैं।

वर्तमान में एल.डी.आर.टी. का महत्व

यह उल्लेखनीय है कि 2000 के दशक के दौरान, प्रति-जैविक प्रतिरोधी (एंटीबायोटिक रेजिस्टेंस) युग शुरू हुआ, जिसके कारण कुछ रोगियों में कई संक्रामक रोग असाध्य हो जाते हैं। एल.डी.आर.टी. वर्तमान में, बिना किसी उपचार/औषधि वाले अनुपचारणीय रोगों के लिए महत्वपूर्ण है। इसका उपयोग विशेष रूप से तब किया जाता है जब एंटीबायोटिक्स, प्रज्वलनरोधी, दर्द-निवारक अन्य औषधियाँ प्रभावी नहीं होती। बीमारियों की सूची जिनके लिए वर्तमान में एल.डी.आर.टी. सबसे महत्वपूर्ण है और/अथवा परीक्षणाधीन है, निम्नलिखित है-

1. कोविड-19 और भविष्य में आने वाली इसी प्रकार की महामारियों के लिए
   - जहां उपचार के विकल्प बहुत सीमित हों
   - जहां टीकों की अनुपलब्धता हो
   - बिना टीकाकरण वाले उच्च-जोखिम मरीज़ों के उपचार हेतु
   - अभूतपूर्व संक्रमण की परिस्थिति में
   - नए प्रकार के रोगलक्षणों की स्थिति में
2. सूक्ष्मजीवी संक्रमण के साथ अनसुलझे निमोनिया के लिए

3. उम्र बढ़ने से संबंधित असाध्य रोगों, जैसे कि
   - तंत्रिका-अपक्षयी रोग
   - कष्टदायक जोड़ों के रोग/अस्थि रोग
4. वैश्विक स्तर पर और भारत में भी कैंसर के बढ़ते बोझ के कारण, अंतिम चरण के रोगियों को उपशामक उपचार के रूप में एल.डी.आर.टी. की आवश्यकता है।

कोविड-19 के दौरान हुए एल.डी.आर.टी. परीक्षणों से हमनें क्या सीखा?

कोविड-19 वैश्विक महामारी के दौरान स्वास्थ्य सेवा में सभी दिशाओं से माँग-आपूर्ति श्रृंखला टूट गई थी, मृत्यु दर बढ़ गई थी, और प्रभावी उपचार विधियों की निरंतर खोज की जा रही थी। लो डोज़ रेडिएशन थेरेपी (एल.डी.आर.टी.) विकल्प के ऐतिहासिक और वर्तमान प्रमाणों के आधार पर, चिकित्सकों एवं शोधकर्ताओं ने कोविड-19 के लिए भी एल.डी.आर.टी. परीक्षणों का प्रस्ताव रखा। विश्व भर में, किए गए 16 अलग-अलग परीक्षणों में (जिनमें से कई परीक्षण भारत में किए गए), कुल 250 से अधिक कोविड-19 संबंधित निमोनियाग्रस्त रोगियों का औषधीय उपचार के साथ-साथ एल.डी.आर.टी. से भी उपचार किया गया। केवल औषधीय उपचार की तुलना में 'एल.डी.आर.टी.' + औषधीय उपचार पर जीवित रहने की संभावना उल्लेखनीय रूप से अधिक और मृत्यु दर का सापेक्ष जोखिम कम पाया गया। इन परीक्षणों के दौरान, बिना किसी तत्काल प्रतिकूल प्रभाव के, ऑक्सीजनेशन स्तर और सूजनरोधी गुणों में उल्लेखनीय सुधार देखा गया और इंट्यूबेशन दरों में भी सुधार के संकेत देखे गए।

क्या एल.डी.आर.टी. सुरक्षित है?

यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न है। उच्च मात्रा में विकिरण हानिकारक हो सकती है। यदि लंबे समय तक या अनेक बार विकिरण के संपर्क में रहे तो कैंसर होने का दीर्घकालिक खतरा भी बढ़ जाता है। लेकिन एल.डी.आर.टी. में विकिरण

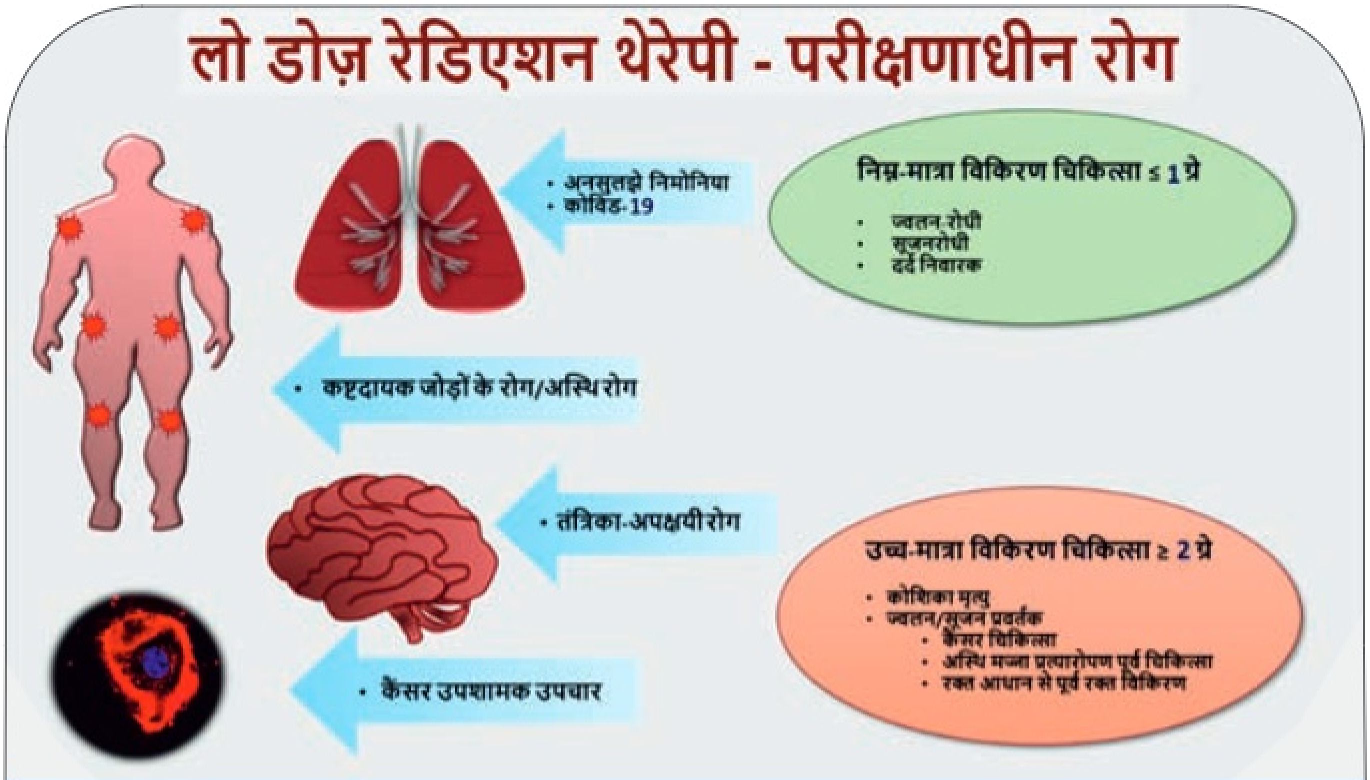

चित्र -1 चिकित्सा के क्षेत्र में एल.डी.आर.टी. के उपयोग की संभावनाओं का प्रारूपण

की अत्यल्प मात्रा (डोज़) का, और अक्सर केवल एक बार ही, उपयोग किया जाता है। अब तक के अध्ययनों से यह पता चला है कि एल.डी.आर.टी. का सावधानीपूर्वक उपयोग सुरक्षित है। इसका उपयोग करने से पहले, चिकित्सक हमेशा संभाव्य जोखिमों और लाभों का आकलन करते हैं।

निष्कर्ष

एल.डी.आर.टी. का उपयोग अभी व्यापक रूप से नहीं किया गया है। इसके अनेक परीक्षणों के परिणाम सकारात्मक रहे हैं, जो भविष्य के लिए उत्साहजनक हैं। चूंकि, इसकी ज्वलन-रोधी क्रियाविधि रोगजनक विशिष्ट नहीं है, इसलिए भविष्य में संभावित वायरल महामारियों सहित अन्य चुनौतीपूर्ण ज्वलन, सूजन संबंधी बीमारियों के लिए इसके उपयोग के विकल्प पर गहन अध्ययन एवं अनुसंधान किया जाना चाहिए। एल.डी.आर.टी. भविष्य में गठिया, दर्द और संक्रमण के इलाज का विशेषकर जब अन्य उपचार काम न करें, एक नियमित हिस्सा बन सकता है।

इसलिए, अगली बार जब आप 'विकिरण' यानि 'रेडिएशन' शब्द सुनें, तो केवल खतरे के बारे में न सोचें। यह भी सोचें कि विज्ञान किस प्रकार से बिना किसी चीर-फाड़ के रोगों के उपचार के लिए भी इन विकिरणों का उपयोग कर रहा है, और इनके उपयोग के नए तरीके खोज रहा है।

आभार

लेखिका इस लेख की संरचना में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सहयोग एवं मार्गदर्शन देने वाले सभी व्यक्तियों विशेषकर डॉ. नागेश भट्ट, वैज्ञानिक अधिकारी-एच, आरपीएंडएडी; श्री अरशद खान, वैज्ञानिक अधिकारी-एच, आरपीएंडएडी और डॉ. (श्रीमती) बलविंदर सपरा, उत्कृष्ट वैज्ञानिक, आयुर्विज्ञान वर्ग, भापअ केंद्र, मुंबई से प्राप्त सतत समर्थन के लिए कृतज्ञतापूर्वक आभार व्यक्त करती हैं।

लेखिका का परिचय

डॉ. (श्रीमती) उषा यादव

डॉ. (श्रीमती) उषा यादव वर्तमान में, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई स्थित विकिरणकीय भौतिकी एवं परामर्श प्रभाग में वैज्ञानिक अधिकारी-एफ के पद पर कार्यरत हैं।

"दुनिया में अग्रणी होने की चाहत रखने वाला कोई भी राष्ट्र, मूलभूत एवं दीर्घ-कालिक अनुसंधान को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकता है।"

- होमी भाभा द्वारा, वर्ष 1943 में 'नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ़ साइंसेज़ ऑफ़ इंडिया (वर्तमान में भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी)' की संगोष्ठी में दिए गए वक्तव्य का अंश

स्काडा - आधुनिक जीवन का गुमनाम नायक

रिंकेश हेमंत पालटीवाले

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

हमारी आधुनिक ज़िंदगी कई ऐसी सुविधाओं पर टिकी हुई है जिनके बिना जीना मुश्किल, या लगभग असंभव है-बिज़ली, पानी, तेल-गैस, परिवहन (ट्रांसपोर्ट) और कारखानों (फैक्टरियों) में उत्पादन, ये सभी उद्योग एक बड़े नेटवर्क की तरह हैं जो हर पल काम करते रहते हैं। उदाहरणार्थ

- घरों से लेकर अस्पताल, स्कूल, कारखाने, आईटी कंपनियां-सभी, हर पल, बिजली पर निर्भर हैं।
- शहरों में हर घर तक साफ पानी पहुँचाना और गंदे पानी का उपचार/प्रबंधन करना अत्यंत महत्वपूर्ण है।

इन उद्योगों को अक्सर 'आज की दुनिया की रीढ़' कहा जाता है क्योंकि

- बिना बिजली और पेट्रोलियम के कारखाने नहीं चलेंगे, परिवहन रुक जाएगा, अर्थ-व्यवस्था ठप पड़ जाएगी।
- पानी, बिजली और परिवहन सीधे-सीधे जन-सामान्य के जीवन से जुड़े हैं।
- तेल, गैस और विद्युत ऊर्जा संयंत्र (पॉवर प्लांट) रणनीतिक संसाधन हैं।
- तेज़ और सुरक्षित औद्योगिक उत्पादन देश के विकास में महत्त्वपूर्ण है।

इनका सही और सुरक्षित संचालन समाज, अर्थ-व्यवस्था और विकास के लिए बेहद ज़रूरी हैं। लेकिन क्या आपने कभी सोचा है कि

- कैसे रोज़ सुबह नल में पानी समय पर पहुंच जाता है?
- कैसे बिजली बिना रुके हर घर और कारखाने को मिलती रहती है?
- कैसे हज़ारों किलोमीटर लंबी गैस पाइपलाइन में रिसाव का पता तुरंत चल जाता है?
- कैसे रेलगाड़ियाँ और मेट्रो अपनी पटरियों पर सुरक्षित दौड़ती रहती हैं?
- कारखानों में मशीनें दिन-रात बिना रुके सटीक सामान तैयार करती रहती हैं?

ये सब काम इंसान अकेले कैसे संभाल सकता है? आज चीज़ें कैसे काम करती हैं, इसके विवरण में जाने से पहले आइए, देखें कि अतीत में ये कैसे काम करती थीं और उन तरीकों के परिणामस्वरूप क्या समस्याएं/सीमाएँ उत्पन्न हुईं। ऐतिहासिक रूप से इन उद्योगों की निगरानी और नियंत्रण आज की तुलना में बिल्कुल अलग तरीके से किया जाता था। उदाहरणार्थ

- **हस्त-चालित मॉनीटरन (मैन्युअल मॉनिटरिंग)**
  - प्रचालक (ऑपरेटर) मशीन या पाइपलाइन के पास जाकर मीटर और गेज पढ़ते थे।
  - टंकी में पानी का स्तर जानने के लिए लोग चढ़कर खुद देखते थे।
  - बिजली घरों में इंजीनियर हर उपकरण पर जाकर आंकड़े (डेटा) नोटबुक में लिखते थे।
- **टेलीफोन और रेडियो से सूचना**
  - दूर-दराज़ की जगहों से जानकारी फोन या रेडियो संदेश के ज़रिए भेजी जाती थी।
  - इसमें समय ज़्यादा लगता था और कई बार जानकारी अधूरी या देर से मिलती थी।

- **स्थानीय नियंत्रण पैनल (लोकल कंट्रोल पैनल)**
  - मशीनों को प्रचालित / बंद (ऑन/ऑफ) करने के लिए स्थानीय पैनल होते थे।
  - अगर कहीं गड़बड़ी हुई तो कर्मचारी को स्वयं जाकर मशीन बंद करनी पड़ती थी।

उस दौर में, ये प्रक्रियाएं धीमी थीं, इंसानों पर निर्भर थीं और कभी-कभी ख़तरनाक भी, जिसके कारण समस्याएं/सीमाएं इत्यादि उत्पन्न हुई। जैसे

- **देरी** – समस्या का पता देर से चलता था।
- **मानव पर निर्भरता** – हर काम इंसान पर निर्भर था, जिससे गलती की संभावना ज़्यादा रहती थी।
- **सुरक्षा जोखिम** – गैस रिसाव या वैद्युत-दोष (बिजली के फॉल्ट) जैसी स्थितियों में कर्मचारियों का जीवन भी खतरे में पड़ता था।

इत्यादि उत्पन्न हुई। **लेकिन आज की बात करें तो, आज**

- किसी शहर की जल आपूर्ति व्यवस्था एक नियंत्रण कक्ष (कंट्रोल रूम) से देखी और चलाई जा सकती है।
- बिजली की हज़ारों लाइनों की स्थिति एक स्क्रीन पर देखी जा सकती है।
- गैस पाइपलाइन में रिसाव होते ही अपने आप अलार्म बज उठता है।
- मेट्रो और रेलगाड़ियों के संकेत (सिग्नल) एक ही जगह से बदल जाते हैं।
- मशीनों का प्रचालन स्वचालित हो गया है।

यह सब मानव के न्यूनतम हस्तक्षेप के साथ, बिना देरी के, और सुरक्षित रूप से हो रहा है। तो आखिर यह सब कैसे मुमकिन है? कोई न कोई तो होगा जो परदे के पीछे हर मशीन, हर वाल्व, हर तार और हर संवेदक (सेंसर) पर नज़र रखता है... **क्या यह जादू है?** खैर, यह जादू तो नहीं है, लेकिन जादू से कम भी नहीं है।

जहाँ एक जादूगर करतब दिखाने के लिए मेहनत करता है, वहीं आधुनिक अभियांत्रिकी एवं मशीनें चुपचाप (या कारखानों/संयंत्रों में शोर के साथ) काम करती हैं, ताकि हम उच्चतम मानकों का जीवन जी सकें। जिस प्रकार एक जादूगर को जादू दिखाने में सहायक उपकरण (प्रॉप्स) आवश्यक होते हैं, उसी प्रकार 'SCADA' इंजीनियरों एवं मशीनों/सेंसरों के सुचारू संचालन में मदद करता है।

तो प्रश्न उठता है कि '**SCADA**' क्या है?

यदि हम सरल शब्दों में बात करें, तो यह एक तरह का 'मस्तिष्क' है जो इन सुविधाओं/व्यवस्थाओं (कारखानों/संयंत्रों/मशीनों/सेंसरों) की निगरानी, और ज़रूरत पड़ने पर नियंत्रण भी करता है। **SCADA (स्काडा)** एक संक्षेपाक्षर है, जिसका पूर्ण विस्तार- 'सुपरवाइज़री कंट्रोल एंड डेटा एक्वीज़ीशन (**S**upervisory **C**ontrol **A**nd **D**ata **A**cquisition) है जिसका अर्थ-निगरानी करना, नियंत्रण करना, और आंकड़े (डेटा) इकट्ठा करना है।

तब प्रश्न यह भी बनता है कि यह SCADA करता क्या है?

सरल शब्दों में कहें तो SCADA तीन कार्य करता है।

1. **देख-रेख** – मशीन, संवेदक (सेंसर) और उपकरण क्या कर रहे हैं, उसकी जानकारी लेता है।
2. **विश्लेषण** – आंकड़ों को संसाधित (प्रोसेस) करके यह पता लगाता है कि सब ठीक है या कोई समस्या है।
3. **नियंत्रण** – अगर आवश्यकता हो तो मशीन/संयंत्र को चालू/बंद करता है, विन्यास (सेटिंग) बदलता है, या अलार्म देता है।

SCADA की कार्य-प्रणाली

- अब वास्तविक - काल नियंत्रण (रियल-टाइम मॉनिटरिंग) संभव है, यानि हर सेंसर के आंकड़े तुरंत नियंत्रण कक्ष (कंट्रोल रूम) तक पहुँचते हैं।
- समस्या आते ही मशीनें स्वयं अलार्म देती हैं और कई बार अपने आप तुरंत सुधारात्मक उपाय सुझाती हैं।

- लगातार रिकॉर्ड होने वाले आंकड़ों से भविष्य की योजना और अनुसंधान (रिसर्च) आसान हो जाता है।
- अब ऑपरेटर को संभावित खतरे वाली जगह पर बार-बार जाने की आवश्यकता नहीं होती है और सब कुछ दूर से नियंत्रित (कंट्रोल) हो जाता है।

अब आइए एक सरल उदाहरण के साथ SCADA के विभिन्न भागों और इसकी कार्यप्रणाली पर नज़र डालें।

SCADA प्रणाली निम्नांकित भागों से मिलकर बनी है।

1. **ह्यूमन मशीन इंटरफ़ेस (HMI)**

- यह एक स्क्रीन होती है जिस पर प्रचालक (ऑपरेटर) पूरी प्रणाली(सिस्टम) देखता है।
- इसमें नक्शे, आरेख (डायग्राम) और ग्राफ होते हैं।
- किसी भी प्राचल में सामान्य से अधिक / कम परिवर्तन होने पर (जैसे कि अगर तापमान अधिक बढ़ गया हो या पानी का दबाव कम हो गया हो) यही स्क्रीन अलार्म दिखाती है।

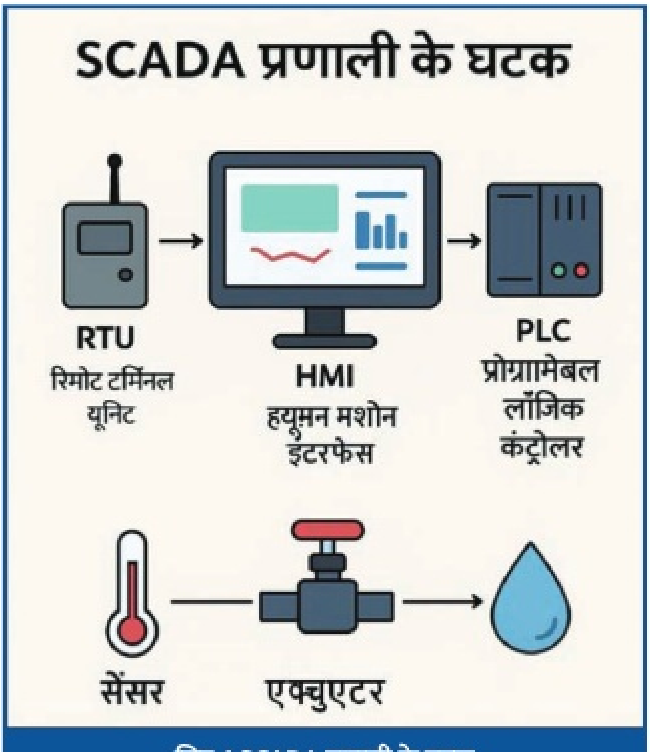

चित्र-1 SCADA प्रणाली के घटक

2. **रिमोट टर्मिनल यूनिट (RTU)**

- ये छोटे कंप्यूटर जैसे उपकरण (डिवाइस) होते हैं जो दूरस्थ संवेदकों (सेंसर) और मशीनों से जुड़े रहते हैं।
- ये उपकरण आंकड़े (डेटा) एकत्रित करते हैं और नियंत्रण संकेत (कंट्रोल सिग्नल) भेजते हैं।
- यदि किसी गाँव के पंप हाउस का जल-स्तर देखना है, तो RTU वहां का डेटा SCADA को भेज देगा।

3. **प्रोग्रामेबल लॉजिक कंट्रोलर (PLC)**

- यह एक तरह का औद्योगिक मस्तिष्क है जो मशीनों को अविलंब नियंत्रित कर सकता है।
- कारखानों की मशीन, बिजलीघर का टरबाइन, या किसी संयंत्र में कन्वेयर बेल्ट को PLC ही नियंत्रित करता है।
- SCADA और PLC मिलकर काम करते हैं, PLC निम्न-स्तर (जैसे घटक स्तर) पर नियंत्रण करता है और SCADA पूरी तस्वीर (जैसे संयंत्र स्तर पर) देखता है।

4. **संवेदक एवं प्रवर्तक (सेंसर और एक्चुएटर)**

- संवेदक (सेंसर) – तापमान, दबाव, स्तर (द्रव / गैस / ठोस), बहाव / प्रवाह (फ्लो), इत्यादि मापते हैं।
- प्रवर्तक (एक्चुएटर) – वाल्व खोलना, मोटर चालू करना, संकेत बदलना, इत्यादि कार्य करते हैं।

SCADA कैसे काम करता है?

मान लीजिए यह एक शहर की जलापूर्ति प्रणाली है जहां

- अलग-अलग जगह पानी की टंकियां और पंप हैं। हर जगह सेंसर लगे हैं जो जलस्तर एवं दबाव मापते हैं।
- RTU या PLC इन सेंसरों से डेटा लेते हैं और नियंत्रण केंद्र (कंट्रोल सेंटर; SCADA सर्वर) को भेजते हैं।
- कंट्रोल सेंटर में HMI स्क्रीन पर आवश्यक सभी आंकड़े, आरेख, इत्यादि दिखाई देते हैं। अगर किसी टंकी में पानी कम है तो अलार्म बजता है।

- ऑपरेटर कंप्यूटर द्वारा तुरंत एक क्लिक में पंप चालू कर सकता है।
- SCADA सिस्टम अपने आप भी सेट किया जा सकता है जिससे जहां पानी कम हो, पंप स्वतः चालू हो जाए।

इस तरह, SCADA कार्यप्रवाह को सुव्यवस्थित करता है और सभी प्रणालियों के सुरक्षित और विश्वसनीय प्रचालन में मदद करता है। SCADA का आविष्कार किसी एक व्यक्ति ने नहीं, बल्कि इंजीनियरों के एक समूह ने किया था, जो ऐसी प्रणालियों के प्रचालन में आने वाली आम समस्याओं को हल करने के लिए एक साथ आए थे। SCADA में पिछले कुछ वर्षों में काफ़ी विकास हुआ है। अब तो SCADA में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस; AI) और इंटरनेट ऑफ़ थिंग्स (IoT) भी जुड़ने लगे हैं।

- SCADA अब सिर्फ मॉनीटरन ही नहीं, बल्कि पूर्वानुमानित रखरखाव भी कर रहा है।
- मोबाइल फोन से नियंत्रित करना भी संभव हो रहा है।

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिए परमाणु ऊर्जा के दोहन के सभी पहलुओं पर अनुसंधान एवं विकास कार्य किया जा रहा है। SCADA यहां हो रहे अनेक कार्यों का अभिन्न अंग है। नाभिकीय ईंधन संविरचन से लेकर परमाणु ऊर्जा संयंत्रों, अनुसंधान रिएक्टरों, ईंधन पुनर्संसाधन संयंत्रों, त्वरकों एवं अनेक अन्य प्रणालियों का प्रचालन SCADA द्वारा आधुनिक बनाया गया है। जन-सामान्य के लिए आवश्यक कार्यों, अनुसंधान एवं विकास तथा आधुनिकीकरण के लिए SCADA बहुत मददगार है।

बिजली, पानी, तेल-गैस, परिवहन, उद्योग और यहां तक कि अनुसंधान, ये सब ऐसे क्षेत्र हैं जिन्हें SCADA लगातार, सुरक्षित और भरोसेमंद बनाए रखता है। हम सोचते हैं कि हमारी ज़िंदगी अपने आप चल रही है। लेकिन सच यह है कि पर्दे के पीछे एक 'निगरानी करने वाला यह तकनीकी मस्तिष्क' हर समय काम कर रहा है।

तो अगली बार जब आप पानी के लिए नल खोलें, लाइट जलाएँ या मेट्रो में यात्रा करें, तो याद रखिए कि यह जादू नहीं है, बल्कि यह SCADA है।

चित्र-2 SCADA के अनुप्रयोग

लेखक का परिचय

श्री रिंकेश हेमंत पालटीवाले

श्री रिंकेश हेमंत पालटीवाले वर्तमान में, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई के नियंत्रण एवं यंत्रीकरण प्रभाग में वैज्ञानिक अधिकारी-सी के पद पर कार्यरत हैं।

विकिरण से बढ़ाएं मत्स्य उत्पादों की शेल्फ-लाइफ

डॉ. प्रशांत कुमार मिश्र

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

बढ़ती जनसंख्या के साथ-साथ 'रोटी, कपड़ा और मकान', ये मूलभूत आवश्यकताएं भी बढ़ती जा रही हैं। खाद्य-सुरक्षा किसी भी देश की आत्मनिर्भरता का आधारभूत आयाम है। इस दिशा में, खाद्य-उत्पादन एवं खाद्य-परिरक्षण, दोनों ही बहुत महत्वपूर्ण हैं। खाद्य-संबंधी उपज के आधार पर प्रति वर्ष औसतन 30 से 40% तक खाद्य-पदार्थ खराब हो जाते हैं, जो एक गंभीर समस्या है। असमय कटाई, संक्रमण, अपर्याप्त भंडारण, अनुचित खाद्य प्रबंधन, खाद्य-परिवहन के दौरान हानियाँ, इत्यादि इसके प्रमुख कारण हैं।

मछली तथा अन्य मत्स्य खाद्य उत्पाद विश्व भर में पौष्टिक एवं स्वादिष्ट खाद्य के रूप में लोकप्रिय हैं। वर्ष 2024 के आंकड़ों के अनुसार, वैश्विक स्तर पर मछली उत्पादन 115 मिलियन टन प्रति वर्ष तक पहुँच गया है। पोषक तत्वों के प्रकार, पानी की अधिक मात्रा और लगभग उदासीन पीएच (pH) होने के कारण, मछली तथा मत्स्य खाद्यों में जीवाणुओं के पनपने का अनुकूल वातावरण पाया जाता है, जिससे ये उत्पाद बहुत जल्दी खराब होने लगते हैं। इसी कारण, वैश्विक स्तर पर पकड़ी गई कुल मछली का लगभग 27 से 38 प्रतिशत अपशिष्ट हो जाता है। उन्नत विधियों एवं तकनीकों की सहायता से इन हानियों को कम से कम करना आवश्यक है।

मत्स्य उत्पादों की जीवनावधि अर्थात शेल्फ-लाइफ बढ़ाने के लिए, वर्तमान में इन्हें हिमशीतित (फ्रोज़न; लगभग -18 डिग्री सेल्सियस) रूप में भंडारित और परिवहन किया जाता है। इस प्रकार से, भंडारण एवं परिवहन के लिए अधिक मात्रा में ऊर्जा की खपत होती है। साथ ही, उपयोग से पहले इन खाद्यों को सामान्य तापमान पर लाने के लिए बर्फ को गलाने की आवश्यकता होती है, जिसके दौरान बर्फ के क्रिस्टल से खाद्य-क्षति हो सकती है और परिणामस्वरूप उपभोक्ताओं की स्वीकार्यता कम हो सकती है। इन कारणों से, हिमशीतित मत्स्य-खाद्य उत्पादों की अपेक्षा ताज़ी मछली एवं मत्स्य उत्पादों को प्राथमिकता दी जाती है। यहां ताज़ी मछली का तात्पर्य जीवित मछली या कम तापमान (शून्य डिग्री सेल्सियस के आसपास) पर रखी गई मछली से है, जिसे हिमशीतित (फ्रोज़न) अथवा अनुकूलित वातावरण पैकेजिंग के तहत भंडारित / संग्रहित नहीं किया जाता है। अधिकाधिक उपभोक्ता-स्वीकार्यता के लिए शीतित भंडारण (कोल्ड स्टोरेज) में इन उत्पादों की जीवनावधि (शेल्फ-लाइफ) को अधिक समय तक बनाए रखना और भी लाभप्रद होगा। वर्ष 2024 के आंकड़ों के अनुसार, मछली की खपत का सबसे पसंदीदा रूप जीवित, ताज़ा और ठंडा (कुल उत्पादन का 44 प्रतिशत) पाया गया है, जबकि हिमशीतित, तैयार और प्रसंस्कृत मछली की खपत, कुल उत्पादन का क्रमशः 34, 12 और 10 प्रतिशत रहा।

मत्स्य-खाद्य उत्पादों की जीवनावधि (शेल्फ-लाइफ) कम होने के कारण, इन्हें पूरी तरह से शीतित-भंडारण (कोल्ड स्टोरेज) में रखा जाता है। इसके लिए, अनुकूल भंडारण सुविधाओं के साथ-साथ उपयुक्त पैकेजिंग, सुरक्षित एवं सक्रिय परतीकरण (कोटिंग), विकिरण-प्रसंस्करण, अनुमत खाद्य योजकों के साथ उपचार जैसी विभिन्न खाद्य-परिरक्षण तकनीकों की भी आवश्यकता होती है। अनेक वैश्विक संस्थाओं जैसे की खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ; FAO), अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (आईएईए; IAEA) एवं विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ; WHO) के संयुक्त अध्ययन के अनुसार, गामा-किरणन, भोजन की जीवनावधि (शेल्फ-लाइफ) को बढ़ाने का एक सुरक्षित एवं प्रभावी

तरीका है। नियंत्रित मात्रा में किया गया गामा-किरणन, रोगाणुओं के डी.एन.ए. (DNA) को तोड़कर, झिल्ली पारगम्यता एवं अन्य कोशिकीय गतिविधियों को प्रभावित करके, रोगाणुओं का क्षय करता है। शीतित भंडारण के दौरान, खाद्य उत्पादों की जीवनावधि को बढ़ाने के लिए प्रयुक्त अन्य संरक्षण विधियों के साथ विकिरण का संयोजन लाभप्रद है। न्यून तापमान पर मछली एवं मत्स्य-खाद्यों को किरणित करना महत्वपूर्ण है क्योंकि इनमें वसा की मात्रा अधिक होती है। परिवेशीय तापमान पर किरणन से वसा-ऑक्सीकरण की संभावना बढ़ जाती है जिससे इन उत्पादों की उपभोक्ता-स्वीकार्यता कम हो जाती है।

खाद्य पदार्थों की बर्बादी को कम करने में खाद्य-परिरक्षण विधियों की भूमिका महत्वपूर्ण है। ये मूलतः तापीय (हीटिंग, ब्लॉचिंग, पाश्चुरीकरण) और गैर-तापीय (रसायनिक परिरक्षक, विकिरण, उच्च दाब प्रसंस्करण) विधियों में वर्गीकृत की जाती हैं। तापीय विधियां, दीर्घकालिक प्रक्रियाएं हैं जिनका उपयोग सूक्ष्मजीवों को हटाने के लिए किया जाता है। इन विधियों में ऊर्जा की अधिक खपत होने से संरक्षण लागत बढ़ जाती है। तापीय-उपचार के निरंतर उपयोग से खाद्य-उत्पाद की गुणवत्ता पर हानिकारक प्रभाव भी पड़ता है, जैसे कि पोषक तत्वों/गुणों की हानि, निम्न संवेदी स्वीकृति, इत्यादि। इन नुकसानों को कम करने के लिए, गैर-तापीय खाद्य प्रसंस्करण तकनीकों, जैसे कि रासायनिक परिरक्षक (कैमिकल प्रिज़रवेटिव) और विकिरण का उपयोग किया जाता है। लागत में सस्ते होने के कारण, रसायनिक परिरक्षकों का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। सामान्यतः ये परिरक्षक भोज्य पदार्थ में उपस्थित रहते हैं और अनेक प्रकार के दुष्प्रभाव जैसे कि एलर्जी, कैंसर, पाचन संबंधी समस्याएं, इत्यादि भी पैदा कर सकते हैं। इसके विपरीत, विकिरण तकनीक एक महत्वपूर्ण गैर-तापीय एवं उपयोगी विकल्प है। इस तकनीक में खाद्य पदार्थों को गैर-आयनकारी विकिरणों (जिनमें परमाणुओं या अणुओं से इलेक्ट्रॉनों को हटाने के लिए पर्याप्त ऊर्जा नहीं होती है), जैसे कि पराबैंगनी, दृश्य-प्रकाश, अवरक्त, रेडियो तरंगों अथवा आयनकारी विकिरणों (जिनमें परमाणुओं या अणुओं से इलेक्ट्रॉनों को हटाने एवं आयन बनाने के लिए पर्याप्त ऊर्जा होती है), जैसे कि गामा-किरणें, एक्स-किरणें, त्वरित-इलेक्ट्रॉन किरणें, इत्यादि की नियंत्रित मात्रा (डोज़) के संपर्क में लाया जाता है। इस प्रक्रिया से खाद्य या कृषि उत्पादों में मौजूद सूक्ष्मजीवों और कीड़ों को नष्ट किया जा सकता है। इससे इन उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार और जीवनावधि (शेल्फ-लाइफ) बढ़ाने में मदद मिलती है। गैर-आयनीकारी विकिरणों की भेदन शक्ति कम होती है और इनका प्रभाव खाद्य-पदार्थों की सतह तक ही सीमित होता है। इसके विपरीत, अधिक भेदन क्षमता होने के कारण खाद्य-संरक्षण / प्रसंस्करण के लिए आयनकारी विकिरणों का उपयोग अधिक लाभप्रद होता है।

खाद्य किरणन हेतु मुख्य रूप से निम्न तीन प्रकार के आयनकारी विकिरण स्रोतों का उपयोग किया जा सकता है।

गामा विकिरण - ये विद्युत चुम्बकीय विकिरण हैं जो रेडियोधर्मी समस्थानिकों जैसे कि कोबाल्ट (^{60}Co), सीज़ियम (^{137}Cs), इत्यादि से उत्सर्जित होती हैं। ^{137}Cs नाभिक, जो निम्न ऊर्जा (0.66 MeV) की एक गामा किरण उत्सर्जित करता है, की अपेक्षा प्रत्येक ^{60}Co नाभिक उच्च ऊर्जा की दो गामा किरणें उत्सर्जित करता है। इसलिए, मात्रात्मक दृष्टि से ^{137}Cs की अपेक्षा, ^{60}Co की अल्प मात्रा ही पर्याप्त होती है। साथ ही, धातु के रूप में प्रयुक्त ^{60}Co स्रोत के जल में अघुलनशील होने से पर्यावरण में रेडियोधर्मिता फैलाव की संभावना भी न्यूनतम हो जाती है। इन कारणों से, खाद्य विकिरण हेतु आमतौर पर ^{60}Co स्रोत का ही उपयोग किया जाता है। गामा विकिरण तकनीक को शीत-पाश्चुरीकरण के लिए एक मात्र ऊर्जा-दक्ष साधन माना जाता है।

इलेक्ट्रॉन किरणें - ये किरणें उच्च-ऊर्जा (10 मेगा इलेक्ट्रॉन

वोल्ट (MeV) तक) के इलेक्ट्रॉनों की धारा के रूप में सामान्यतः रैखिक इलेक्ट्रॉन त्वरक से प्राप्त की जाती हैं। आर्थिक दृष्टि से किफ़ायती रूप में प्राप्त इन इलेक्ट्रॉन किरणों की भेदन क्षमता, गामा विकिरणों की अपेक्षा कम होती है। दूसरी ओर, इनके लिए किसी रेडियोधर्मी स्रोत की आवश्यकता नहीं होती है और उपयोग में न होने पर इलेक्ट्रॉन किरण स्रोत को बंद भी किया जा सकता है। जहां एक ओर, गामा विकिरणों का उपयोग उच्च भेदन क्षमता एवं बड़े आकार के निकायों के किरणन हेतु पसंद किया जाता है वहीं दूसरी ओर अधिक नियंत्रण एवं तेज़ गति से, रेडियोधर्मियों के बिना किए जाने वाले किरणन हेतु इलेक्ट्रॉन किरणों का उपयोग अनुशंसित है।

एक्स-किरणें - जब इलेक्ट्रॉनों की उच्च-ऊर्जा धारा को लगभग 7.5 मेगा इलेक्ट्रॉन वोल्ट (MeV) तक की इलेक्ट्रॉन ऊर्जा वाले किसी लक्ष्य पदार्थ से परावर्तित किया जाता है तब, जो एक्स-किरणें उत्पन्न होती हैं, उनका उपयोग भी खाद्य-किरणन के लिए किया जा सकता है। इन किरणों की भेदन क्षमता भी अधिक होती है और इलेक्ट्रॉन किरणों की तरह ही इन्हें प्राप्त करने के लिए किसी रेडियोधर्मी स्रोत की आवश्यकता नहीं होती है। साथ ही, उपयोग में न होने पर इन्हें बंद किया जा सकता है। एक्स-किरणों के ये स्रोत बहुत महंगे होते हैं।

चित्र –1 विकिरणित खाद्य उत्पादों पर अनिवार्य रूप से लगाया जाने वाला चिह्न (लेबल) - 'रेडुरा'

विकिरणित खाद्य उत्पादों पर एक विशेष चिह्न (लेबल), जिसे 'रेडुरा' कहते हैं (चित्र-1), लगाया जाता है, ताकि व्यापारियों, वितरकों एवं उपभोक्ताओं को खाद्य पदार्थ के विकिरणित होने का पता चल सके। वर्तमान में, भारत में 28 खाद्य विकिरण संयंत्र हैं जिनमें से 6 सरकारी क्षेत्र द्वारा और शेष 22 निजी क्षेत्र द्वारा प्रचालनरत हैं। किसान एवं व्यापारी इनका उपयोग कर सकते हैं। भविष्य में इस प्रकार के अनेक संयंत्र लगाने की योजना है।

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में, मछली एवं अन्य मत्स्य-खाद्य पदार्थों के परिरक्षण एवं प्रसंस्करण के लिए प्रगत अनुसंधान एवं विकास कार्य किया जा रहा है, जिसका मुख्य उद्देश्य खाद्य गुणवत्ता एवं पौष्टिक गुणों में न्यूनतम क्षय के

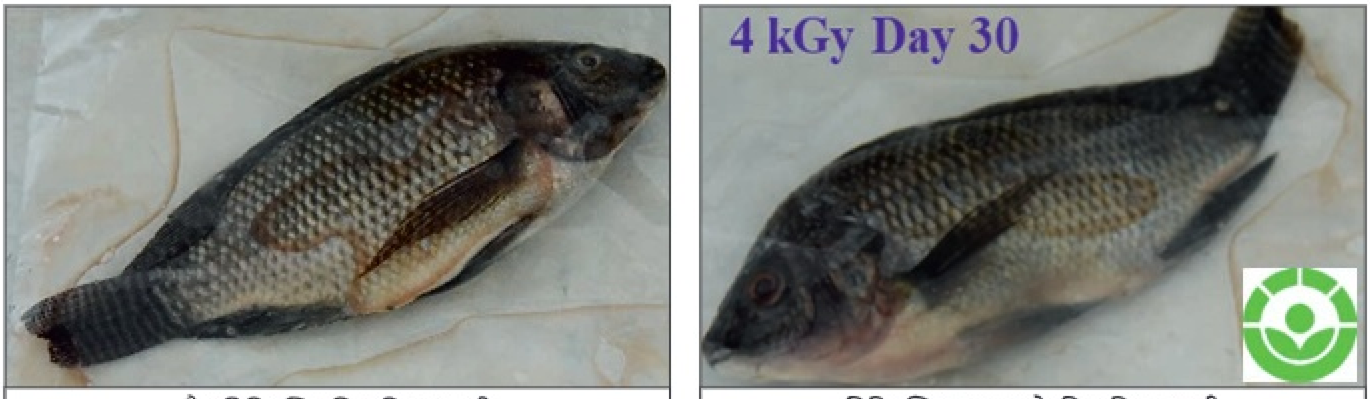

गैर -विकिरणित तिलापिया मछली
शेल्फ लाइफ - 7 दिन, 1 डिग्री सेल्सियस

विकिरणित (4000 ग्रे) तिलापिया मछली
शेल्फ लाइफ - 30 दिन, 1 डिग्री सेल्सियस

चित्र –2 तिलापिया मछली के विकिरण प्रसंस्करण से प्राप्त परिणाम

गैर -विकिरणित रोहू मछली
शेल्फ लाइफ - 2 दिन, 1 डिग्री सेल्सियस

विकिरणित (4000 ग्रे) रोहू मछली
शेल्फ लाइफ - 23 दिन, 1 डिग्री सेल्सियस

चित्र -3 रोहू मछली के विकिरण प्रसंस्करण से प्राप्त परिणाम

साथ इन खाद्यों की जीवनावधि को बढ़ाने के लिए स्वदेशी तकनीकों एवं विधियों का विकास करना है। चित्र संख्या-2 से 5 में इस दिशा में, केंद्र में किए जा रहे अनुसंधान कार्यों के कुछ परिणामों को दर्शाया गया है।

गैर-विकिरणित
रोहू मछली कतली
शेल्फ लाइफ - 2 दिन,
4 डिग्री सेल्सियस

विकिरणित (2000 ग्रे) और
उपचारित रोहू मछली कतली;
शेल्फ लाइफ - 5 दिन,
4 डिग्री सेल्सियस

चित्र -4 रोहू मछली कतली के विकिरण प्रसंस्करण एवं अजवाइन अर्क उपचार के परिणाम

गैर-विकिरणित
सुरमई मछली कतली
शेल्फ लाइफ - 2 दिन,
4 डिग्री सेल्सियस

विकिरणित (2000 ग्रे) और
सुरमई मछली कतली;
शेल्फ लाइफ - 10 दिन,
4 डिग्री सेल्सियस

चित्र -5 सुरमई मछली कतली के विकिरण प्रसंस्करण एवं अजवाइन अर्क उपचार के परिणाम

वैज्ञानिक समुदाय विकिरण तकनीकों के खाद्य-सुरक्षा हेतु संभाव्य अनुप्रयोगों के अन्वेषण एवं विकास हेतु निरंतर प्रयासरत हैं।

फलों, सब्जियों, मछली और मांस उत्पादों को सूक्ष्मजीवी संदूषण से बचाने के लिए विकिरण सबसे अच्छी विधि मानी जाती है। खाद्य विकिरण का व्यापक कार्यान्वयन अन्य पारंपरिक परिशोधन विधियों की तुलना में अपनी उच्च दक्षता और कम लागत के कारण खाद्य-सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

लेखक का परिचय

डॉ. प्रशांत कुमार मिश्र

डॉ. प्रशांत कुमार मिश्र वर्तमान में, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई के खाद्य प्रौद्योगिकी प्रभाग में वैज्ञानिक अधिकारी-ई के पद पर कार्यरत हैं।

हाइड्रोजन - भविष्य का हरित ईंधन

आयोडीन-सल्फर ताप-रसायनिक प्रक्रिया से हाइड्रोजन उत्पादन

एच. ज़ेड. फ़ानी और डॉ. ए. श्रीनिवास राव

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

भारत वर्तमान में चीन और संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद विश्व का तीसरा सबसे बड़ा ऊर्जा उपभोक्ता देश है। बढ़ते औद्योगिकीकरण, शहरीकरण और विद्युतीकरण के कारण ऊर्जा की मांग में निरंतर वृद्धि हो रही है। हालांकि, वैश्विक औसत की तुलना में भारत की प्रति व्यक्ति ऊर्जा खपत अभी भी कम है, जो भविष्य में विकास की व्यापक संभावनाओं को दर्शाती है। वर्तमान में, देश की कुल विद्युत उत्पादन क्षमता का लगभग 55-60% हिस्सा कोयला-आधारित तापीय संयंत्रों से प्राप्त होता है, जो ऊर्जा सुरक्षा में कोयले की प्रधानता को रेखांकित करता है। दुनिया के पाँचवें सबसे बड़े कोयला भंडार भारत में ही हैं, जिसके चलते देश अपनी वर्तमान ऊर्जा आवश्यकताओं के लिए मुख्यतया इसी स्रोत पर निर्भर है। परिवहन और औद्योगिक क्षेत्रों के लिए आवश्यक कच्चे तेल की 30-35% हिस्सेदारी के लिए भारत भारी मात्रा में आयात पर निर्भर है, जबकि कुल विद्युत उत्पादन में प्राकृतिक गैस का योगदान लगभग 6-7% है। संक्षेप में, भारत की वर्तमान ऊर्जा आवश्यकताओं का 85-90% हिस्सा जीवाश्म ईंधनों (कोयला, तेल और गैस) से ही प्राप्त होता है, जो देश की ऊर्जा सुरक्षा में इनकी निर्णायक भूमिका को दर्शाता है।

भारत में कार्बन उत्सर्जन को कम करने और ऊर्जा विविधता के राष्ट्रीय लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का तेज़ी से विस्तार हो रहा है। वर्तमान में, भारत विश्व के शीर्ष सौर ऊर्जा उत्पादकों में शामिल है, जहाँ कुल विद्युत उत्पादन में सौर ऊर्जा की हिस्सेदारी 10-12% है। इसी तरह, भारत अपनी कुल बिजली आपूर्ति में 8-10% पवन ऊर्जा अंश के साथ दुनिया का चौथा सबसे बड़ा पवन ऊर्जा उत्पादक है। जलविद्युत एवं बायोमास-आधारित ऊर्जा का योगदान भी क्रमशः 12-15% एवं 2-3% है। जीवाश्म ईंधनों की सीमित उपलब्धता और उनसे होने वाले प्रदूषण एवं कार्बन उत्सर्जन की चुनौतियों को देखते हुए, परमाणु ऊर्जा जैसे स्वच्छ और उच्च क्षमता वाले प्राथमिक ऊर्जा स्रोतों की आवश्यकता अब निरंतर बढ़ रही है।

गैर-नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों की सीमित उपलब्धता ने स्वच्छ और टिकाऊ विकल्पों की मांग भी बढ़ा दी है। इस दिशा में हाइड्रोजन एक प्रमुख ऊर्जा वाहक के रूप में उभरा है। वर्तमान में, कुल उत्पादित हाइड्रोजन का 85-90% हिस्सा उर्वरक उत्पादन और पेट्रोलियम के परिष्करण (रिफाइनिंग) में उपयोग होता है, जबकि शेष 10% धातुकर्म (मेटलर्जी) और ईंधन के रूप में प्रयुक्त होता है। परिवहन क्षेत्र में यह ईंधन सेल (फ्यूल सेल) के साथ मिलकर प्रदूषण कम करने का एक बड़ा माध्यम बन सकता है। हाइड्रोजन के उत्पादन को प्रयुक्त ऊर्जा स्रोत और रसायनिक प्रक्रिया के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है।

वर्तमान में, हाइड्रोजन (H_2) उत्पादन के लिए 'भाप मीथेन अभिक्रिया', जिसे 'स्टीम मीथेन रिफॉर्मिंग' भी कहते हैं, सबसे व्यापक एवं व्यावसायिक रूप से प्रयुक्त तकनीक है। इस प्रक्रिया में प्राकृतिक गैस से हाइड्रोजन प्राप्त की जाती है। किन्तु, इस प्रक्रिया में भारी मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) उत्सर्जित होती है, जो पर्यावरण की दृष्टि से गंभीर चुनौती है। इस समस्या को कम करने के लिए 'कार्बन प्रग्रहण एवं पृथक्करण' (कार्बन कैप्चर एंड सीक्वेस्ट्रेशन; CCS) तकनीकों का विकास भी किया जा रहा है, ताकि उत्सर्जित CO_2 को पृथक कर सुरक्षित रूप से संग्रहित किया जा सके।

'हरित हाइड्रोजन', जिसे 'ग्रीन हाइड्रोजन' भी कहते हैं, भविष्य के लिए ऊर्जा का स्वच्छ एवं टिकाऊ विकल्प माना जा रहा है। नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों द्वारा प्राप्त बिजली के उपयोग द्वारा जल के विद्युत अपघटन से उत्पादित होने से इसे 'हरित हाइड्रोजन' कहते हैं। इस प्रक्रिया में सौर, पवन तथा जल विद्युत जैसी स्वच्छ ऊर्जा का उपयोग किया जाता है, जिससे कार्बन उत्सर्जन नगण्य रहता है। इसके अतिरिक्त, बायोमास, शैवाल तथा बैक्टीरिया-आधारित जैविक प्रक्रियाएं भी पर्यावरण-अनुकूल हाइड्रोजन उत्पादन के उभरते हुए महत्वपूर्ण स्रोत हैं। सौर (सोलर) हाइड्रोजन का उत्पादन प्रकाश-विद्युतरसायनिक सेल (फोटो-इलेक्ट्रोकेमिकल सेल; PECC) के माध्यम से किया जाता है, जिसमें सौर ऊर्जा के उपयोग से जल के अणुओं को हाइड्रोजन और ऑक्सीजन में विभाजित किया जाता है। यह तकनीक स्वच्छ ऊर्जा उत्पादन की दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है।

जल से हाइड्रोजन प्राप्त करने के लिए विभिन्न ऊष्मा-रसायनिक (थर्मो-केमिकल) प्रक्रियाओं का भी अध्ययन किया जा रहा है। इनमें कॉपर-क्लोरीन (Cu-Cl) तथा ज़िंक (Zinc) आधारित ऊष्मा-रसायनिक चक्र अपनी उच्च दक्षता एवं सौर तथा परमाणु ऊर्जा के साथ अनुकूलता के कारण विशेष महत्व रखते हैं। वहीं, संकर-गंधक (हाइब्रिड-सल्फर) प्रक्रिया में सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2) और जल की सहायता से हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन का उत्पादन किया जाता है। ये विकल्प भविष्य की स्वच्छ ऊर्जा तकनीकों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। बड़े पैमाने पर हाइड्रोजन उत्पादन के लिए'आयोडीन-गंधक प्रक्रिया'अथवा'आयोडीन-सल्फर (I-S) प्रक्रिया, ऊष्मा-रसायनिक बंद-चक्र (थर्मो-केमिकल क्लोज़ सायकल) तकनीकों में प्रमुख एवं गहन रूप से अध्ययन की गई प्रक्रियाओं में से एक है। इस प्रक्रिया में गंधक (सल्फर; S) और आयोडीन (I) की सहायता से जल (H_2O) को हाइड्रोजन (H_2) और ऑक्सीजन (O_2) में विभाजित किया जाता है। इसकी सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि पूरी प्रक्रिया द्रव अवस्था (लिक्विड फेज़) में संचालित होती है, जिससे ऊर्जा की हानि कम होती है तथा प्रक्रिया की ऊष्मागतिकीय दक्षता (थर्मोडायनेमिक एफिशिएंसी) अधिक रहती है। इसी कारण, इसे आर्थिक रूप से व्यवहार्य एवं पर्यावरण के अनुकूल तकनीक माना जाता है।

आयोडीन-सल्फर (I-S) प्रक्रिया तीन चरणों में कार्य करती है जिन्हें (1) बन्सन-अभिक्रिया, (2) सल्फ्यूरिक अम्ल अपघटन तथा (3) हाइड्रोआयोडिक अम्ल अपघटन चरण द्वारा जाना जाता है। प्रथम चरण में सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2), आयोडीन (I_2) और जल की अभिक्रिया कराई जाती है, जिससे हाइड्रोआयोडिक अम्ल (HI) और सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) के जलीय विलयन प्राप्त होते हैं। जल एवं आयोडीन की अधिकता के कारण अभिक्रिया उत्पाद दो अलग-अलग प्रावस्थाओं में विभाजित हो जाते हैं, जिससे इनके पृथक्करण में सुविधा होती है। पृथक्करण के पश्चात हाइड्रोआयोडिक (HI) अम्ल से अतिरिक्त आयोडीन (I_2) को हटाया जाता है तथा हाइड्रोआयोडिक अम्ल (HI) को लगभग 450°C तापमान पर विघटित किया जाता है, जिससे हाइड्रोजन गैस (H_2) तथा आयोडीन (I_2) प्राप्त होते हैं। दूसरी ओर, सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) को लगभग 850°C तापमान पर विघटित किया जाता है, जिससे ऑक्सीजन (O_2), सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2) और जल (H_2O) प्राप्त होते हैं। प्राप्त आयोडीन (I_2) और सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2) को पुनः बन्सन रिएक्टर में भेज दिया जाता है, जिससे यह प्रक्रिया एक कुशल 'बंद-पाश' (क्लोज़्ड-लूप) प्रणाली के रूप में कार्य करती है।

आयोडीन-सल्फर (I-S) प्रक्रिया की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें केवल जल और ऊष्मा की खपत होती है, जबकि उत्पाद के रूप में स्वच्छ हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन प्राप्त होते हैं। साथ ही, इस प्रक्रिया को परमाणु एवं सौर ऊर्जा जैसे उच्च-ताप स्रोतों के साथ भी प्रचालित किया जा सकता है। इसलिए, I-S प्रक्रिया को भविष्य की स्वच्छ, टिकाऊ और कार्बन-मुक्त ऊर्जा प्रणाली के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण तकनीक माना जाता है।

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र (BARC) द्वारा वायुमंडलीय दबाव पर प्रचालित, 150 नॉर्मल लीटर प्रति घंटा (NLPH) क्षमता वाली, कांच से निर्मित (ग्लास सिस्टम) बंद-चक्रीय (क्लोज़्ड-सायकल) आयोडीन-सल्फर (I-S) प्रक्रिया प्रणाली का सफल प्रदर्शन किया गया है जो एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इस तकनीक को औद्योगिक स्तर पर ले जाने के लिए अत्याधुनिक नियंत्रण प्रणालियों और उपकरणों से युक्त, धात्विक संरचनात्मक पदार्थों से निर्मित संयंत्र (मेटल-बेस्ड प्लांट) विकसित किया जा रहा है। इस क्रम में, 3000 नॉर्मल लीटर प्रति घंटा (NLPH) की विशाल क्षमता वाला एक प्रायोगिक संयंत्र (पायलट प्लांट) स्थापित किया जा रहा है, जिसका पूर्ण प्रदर्शन वर्ष 2027 तक निर्धारित है। यह परियोजना भारत के हरित हाइड्रोजन उत्पादन को बड़े पैमाने पर व्यावहारिक बनाने की दिशा में एक निर्णायक कदम है।

इसके अतिरिक्त, एक संशोधित आयोडीन-सल्फर (IS) प्रक्रिया के विकास पर भी व्यापक शोध किया जा रहा है, जिसका उद्देश्य हाइड्रोजन के साथ-साथ सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) को सह-उत्पाद के रूप में प्राप्त करना है। यह औद्योगिक दृष्टि से अति-महत्वपूर्ण है, क्योंकि उर्वरक, पेट्रोकेमिकल, धातु प्रसंस्करण तथा रिफाइनिंग जैसे उद्योगों में सल्फ्यूरिक अम्ल की अत्यधिक मांग रहती है। हाइड्रोजन उत्पादन के साथ, उपयोगी अन्य रसायनों का सह-उत्पादन, प्रक्रिया की आर्थिक व्यवहार्यता और औद्योगिक उपयोगिता बढ़ा देता है। इसी दिशा में, औद्योगिक भागीदारों के सहयोग से अनुसंधान कार्य जारी है तथा इस नयी तकनीक से सम्बंधित दो पेटेंट भी दर्ज किए जा चुके हैं।

आभार

लेखकगण इस लेख की संरचना में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सहयोग एवं मार्गदर्शन देने वाले सभी व्यक्तियों विशेषकर श्री एम. एस. देशपांडे, उत्कृष्ट वैज्ञानिक, रसायनिक प्रौद्योगिकी वर्ग, भापअ केंद्र और डॉ. वी. नफीस अहमद, वैज्ञानिक अधिकारी-जी, रसायनिक प्रौद्योगिकी प्रभाग, भापअ केंद्र से प्राप्त सतत समर्थन के लिए कृतज्ञतापूर्वक आभार व्यक्त करते हैं।

लेखकगण का परिचय

श्री एच ज़ेड फ़ानी

डॉ. ए. श्रीनिवास राव

श्री एच ज़ेड फ़ानी, वैज्ञानिक अधिकारी-एफ और डॉ. ए. श्रीनिवास राव, वैज्ञानिक अधिकारी-एच वर्तमान में, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई के रसायनिक प्रौद्योगिकी प्रभाग में कार्यरत हैं।

रेडियो इमेजिंग - जीवाणु संक्रमण के निदान में अहम

डॉ. ज्योत्स्ना भट्टमित्रा और अनुष्का सचदेवा

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

बैक्टीरिया, वायरस, कवक (फंगस) या परजीवी जैसे सूक्ष्मजीव जब शरीर में प्रवेश करते हैं और संख्या में बढ़ने लगते हैं तो व्यक्ति संक्रमण का शिकार होता है। संक्रमण सामान्यतः बुखार (ज्वर), लालिमा, सूजन, दर्द और प्रभावित स्थान पर गर्माहट (प्रदाह) जैसे लक्षणों के रूप में प्रकट होता है। संक्रमण के प्रकार और स्थान के अनुसार थकान, मवाद (पस) या स्राव (डिस्चार्ज), गले में खराश, खांसी, दस्त या उलटी जैसे अन्य लक्षण भी दिखाई दे सकते हैं। कई मामलों में रक्त परीक्षण में श्वेत रक्त कोशिकाओं (ल्यूकोसाइट्स) की संख्या अधिक पाई जाती है, जो शरीर की प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया को दर्शाती है। ऐसा अनुमान है कि वर्ष 2050 तक कैंसर की तुलना में प्रतिजैविक (एंटीबायोटिक)-प्रतिरोधी संक्रमणों से जान गंवाने वालों की संख्या अधिक होगी। संक्रमणों का समय पर पता लगाना रोगाणुरोधी प्रतिरोध (एंटी-माइक्रोबियल रेज़िस्टेंस) के खतरे से निपटने के लिए एक प्रभावी कार्यनीति है, जिससे रोगियों को उपयुक्त प्रतिजैविक (एंटीबायोटिक) औषधियां मिलना सुनिश्चित किया जा सकता है।

परंपरागत निदान प्रणाली में सूक्ष्मजीवविज्ञान (माइक्रोबायोलॉजी), सूक्ष्मदर्शिकी (माइक्रोस्कोपी) और आण्विक जीवविज्ञान (मॉलिक्यूलर बायोलॉजी) का उपयोग किया जाता है, जिनमें मूत्र, रक्त (जो सामान्यतया संक्रमण केन्द्र का आदर्श प्रतिनिधित्व नहीं दर्शाता है) या उत्तक-परीक्षण (बायोप्सी; जो चीर-फाड़ युक्त प्रक्रिया है) जैसे जैवनमूनों की आवश्यकता होती है। साथ ही, ये तकनीकें काफी समय लेती हैं। आधुनिक प्रतिबिम्बन (इमेजिंग) तकनीकें, इसके लिए प्रभावी नैदानिक विकल्प हैं।

नैदानिक प्रतिबिम्बन (इमेजिंग) का केन्द्रित / स्थानीय संक्रमणों, जैसे कि अज्ञात कारणों से होने वाला बुखार (एफ़यूओ), अस्थिमज्जा संक्रमण (ऑस्टियो-मायलाइटिस), कोमल ऊतक संक्रमण (एसटीआई), हड्डियों के प्रत्यारोपण / डिवाइस से संबंधित संक्रमण, संक्रामक अंतःहृद्शोथ (हृदय के अंदरूनी हिस्से की सूजन; एंडोकार्डाइटिस), इत्यादि की जांच में महत्वपूर्ण योगदान होता है। सामान्यतया प्रचलित प्रतिबिम्बन तकनीकें जैसे एक्स-रे, कम्प्यूटरीकृत टोमोग्राफी (सीटी स्कैन), चुंबकीय अनुनाद इमेजिंग (एमआरआई) और अल्ट्रासोनोग्राफी (यूएसजी) जीवाणुरहित सूजन से संक्रमण को भेद करने में सक्षम नहीं हैं। इसके अलावा, ये तकनीकें ऊतक/अंग में सकल परिवर्तनों का आकलन कर सकती हैं जो आमतौर पर संक्रमण के बाद के चरणों में होते हैं। शीघ्र परिणाम प्राप्त करने के लिए, नाभिकीय प्रतिबिम्बन (इमेजिंग) तकनीकें सहायक हो सकती हैं क्योंकि वे शारीरिक परिवर्तनों से पहले प्रकट होने वाले शारीरिक क्रियात्मक परिवर्तनों की जानकारी देती हैं। चित्र-1 में विभिन्न प्रतिबिम्बन/ नैदानिक तकनीकों एवं उनके द्वारा प्राप्त जानकारियों को सांकेतिक रूप से दर्शाया गया है।

नाभिकीय चिकित्सा में रेडियोधर्मी तत्वों (जिन्हें रेडियोआइसोटोप भी कहा जाता है) का उपयोग किया जाता है। ये तत्व अस्थायी होते हैं एवं अधिक स्थायी अवस्था प्राप्त करने के लिए विविध प्रकार की विकिरण (रेडिएशन) उत्सर्जित करते हैं। नाभिकीय चिकित्सा में, इन तत्वों का

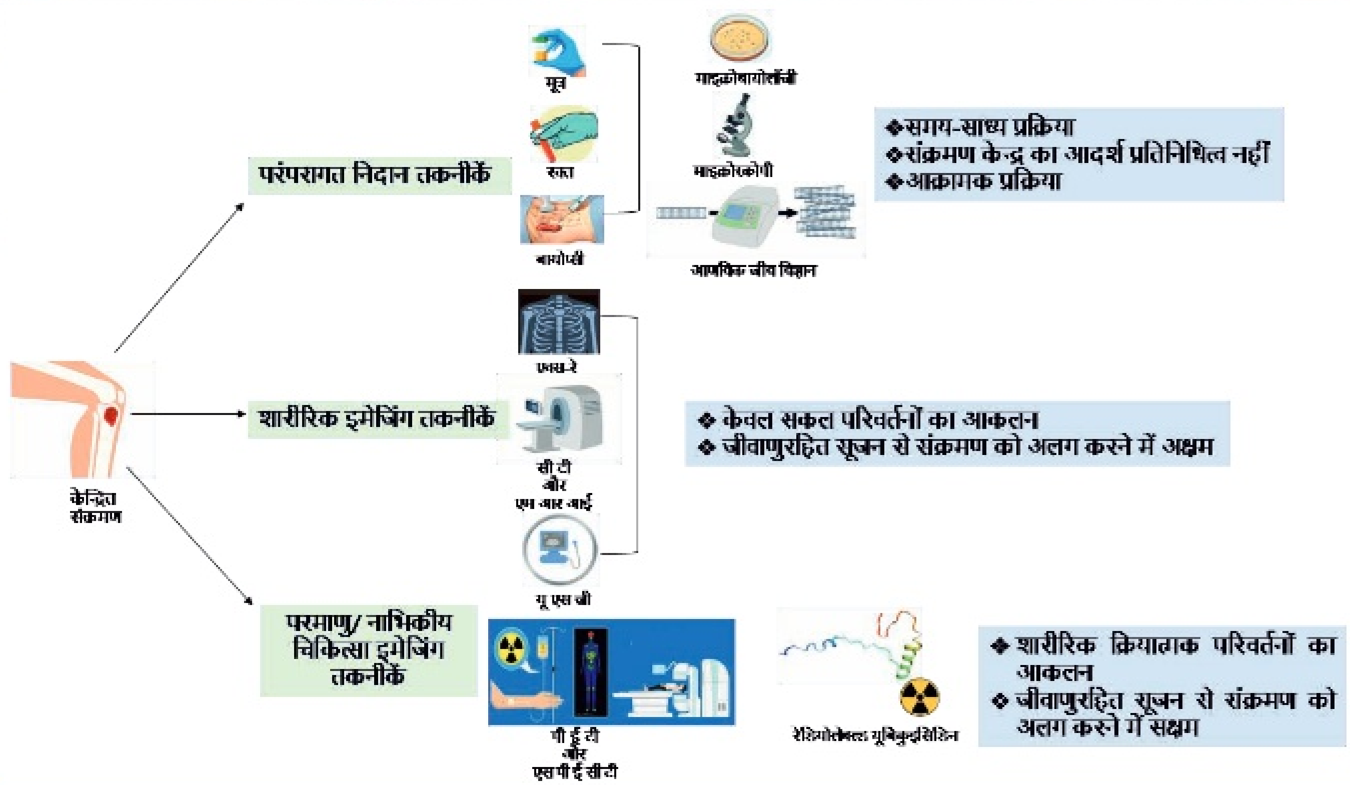

चित्र-1 विभिन्न प्रतिबिम्बन / नैदानिक तकनीकें एवं उनके द्वारा प्राप्त जानकारियां

उपयोग विभिन्न रोगों के निदान एवं उपचार दोनों के लिए किया जाता है। इनका उपयोग शारीरिक क्रियाओं को देखने या विशिष्ट ऊतकों और अंगों को लक्षित करने के लिए अनुरेखक (ट्रेसर) के रूप में किया जा सकता है। कैंसर कोशिकाओं को नष्ट करने हेतु विकिरण प्रदान करने के लिए भी इनका उपयोग किया जा सकता है।

नैदानिक प्रतिबिम्बन (इमेजिंग) में कई प्रकार के रेडियोआइसोटोपों का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। ^{99m}Tc सबसे अधिक उपयोग किया जाने वाला रेडियोआइसोटोप है। उपयुक्त अर्ध-आयु ($t_1/_2$ = छह घंटे) और गामा विकिरण उत्सर्जन के कारण हड्डियों, हृदय, गुर्दे और यकृत के प्रतिबिम्बन (इमेजिंग) के लिए इसे वाहक अणुओं (कैरियर मॉलेक्यूल्स) से जोड़ने के बाद उपयोग में लाया जाता है। अन्य रेडियोआइसोटोप जैसे कि ^{131}I और ^{123}I का उपयोग थायरॉयड और मस्तिष्क के प्रतिबिम्बन (इमेजिंग) के लिए किया जाता है। ^{201}Tl आमतौर पर मायोकार्डियल परफ्यूज़न (हृदय रक्त प्रवाह) अध्ययनों में प्रयुक्त होता है। ^{18}F (विशेष रूप से फ्लोरोडीऑक्सीग्लूकोस; ^{18}F-FDG के रूप में) कैंसर, मस्तिष्क और हृदय के चयापचय (मेटाबोलिज़्म) का मूल्यांकन करने के लिए एक मानक ट्रेसर है। ^{68}Ga का उपयोग सूजन, संक्रमण और कैंसर के निदान में व्यापक रूप से होता है।

पॉज़िट्रॉन एमिशन टोमोग्राफी (PET) और सिंगल फोटॉन एमिशन कंप्यूटेड टोमोग्राफी (SPECT) भी बहुप्रचलित नाभिकीय चिकित्सा पद्धातियाँ हैं। दोनों में ही इमेजिंग स्कैन के लिए उपयुक्त रेडियोआइसोटोप (ट्रेसर) को अंतर्शिरा (इंट्रावेनस) इंजेक्शन द्वारा शरीर में प्रवेशित कराया जाता है। रेडियोधर्मी ट्रेसर ऐसे वाहक अणुओं (कैरियर मॉलेक्यूल्स) से बने होते हैं जो रेडियोधर्मी परमाणु से दृढ़ रूप से बंधित

होते हैं। ये वाहक अणु स्कैन के उद्देश्य के आधार पर अनेक प्रकार के होते हैं। कुछ ट्रेसर ऐसे अणुओं का उपयोग करते हैं जो शरीर में किसी विशिष्ट प्रोटीन या शर्करा की ओर निर्देशित होते हैं। शोधकर्ताओं द्वारा एक आदर्श अनुरेखक की चर्चा भी की गई है। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि रेडियोट्रेसर को संक्रमण की इमेजिंग के लिए उच्च सुग्राह्यता और विशिष्टता प्रदर्शित करनी चाहिए। इसके द्वारा संक्रमण को जीवाणुरहित सूजन से स्पष्ट रूप से अलग किया जाना चाहिए और गैर-लक्षित ऊतकों में न्यूनतम अवशोषण प्रदर्शित करना चाहिए।

संक्रमण प्रतिबिम्बन (इमेजिंग) में रेडियोभेषजों की भागीदारी 1970 के दशक में शुरू हुई, जब ^{67}Ga एक प्रमुख रेडियोआइसोटोप के रूप में उभरा। ^{67}Ga साइट्रेट के बाद, 1980 के दशक में, पात्रे (इनविट्रो) ^{111}In या ^{99m}Tc रेडियोचिह्नित श्वेत रक्त कोशिकाओं जो संक्रमण के स्थान पर एकत्रित हो सकते हैं, रेडियो इमेजिंग हेतु विकल्प के रूप में उभरे और अभी भी संक्रमण निदान के लिए महत्वपूर्ण हैं। ये तकनीकें संक्रमण को नहीं, बल्कि उसके प्रभावों या लक्षणों का विश्लेषण कर रही थीं। तत्पश्चात, प्रत्यक्ष संसूचन (डायरेक्ट डिटेक्शन) के लिए संक्रमण-विशिष्ट एजेंट विकसित किए गए। संक्रमण इमेजिंग में इस विशिष्टता को लाने के लिए, प्रतिजैविक (एंटीबायोटिक्स), जो चयनात्मक रूप से रोगजनकों के साथ अंतःक्रिया करते हैं, रेडियोचिह्नित किए जाने वाले पहले विकल्पों में से एक थे और ट्रेसर के रूप में उपयोग किए जाते थे (उदाहरणार्थ ^{99m}Tc-सिप्रोफ्लॉक्सासिन)।

जीवाणुरहित सूजन और संक्रमण में अंतर करना बहुत ज़रूरी है क्योंकि उससे चिकित्सा प्रद्धति का निर्णय लिया जा सकता है। कई मौजूदा तकनीकें ये अंतर करने में असमर्थ हैं या उनमें सुधार की संभावनाएँ हैं।

इसलिए, नए निदान एजेंटों की खोज जारी है। रोगाणुरोधी / एंटीमाइक्रोबियल पेप्टाइडों संक्रमण इमेजिंग एजेंट्स के डिज़ाइन के लिए आशाजनक विकल्प हैं। संक्रमण के इलाज में इन पेप्टाइडों को संभावित औषधियों के रूप में भी परखा जा रहा है। भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के रेडियोफार्मास्युटिकल्स प्रभाग में ऐसे ही कुछ रेडियोचिह्नित रोगाणुरोधी पेप्टाइडों पर शोध कार्य किया जा रहा है।

यूबिक्विसिडिन एक प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला राइबोसोमिक प्रोटीन है जो अंतरण (ट्रांसलेशन-mRNA से प्रोटीन निर्माण) की प्रक्रिया में शामिल होता है। इसके अतिरिक्त, यह भी रिपोर्ट किया गया है कि इसमें रोगाणुरोधी गुण होते हैं और यह जीवाणु झिल्लियों से अंतर्क्रिया करने में सक्षम हो सकता है। यूबिक्विसिडिन एक धनायनिक AMP है, जो 59 एमिनो अम्लों से बना है। संक्रमण प्रतिबिम्बन के क्षेत्र में यह एक अच्छी तरह से जांचा गया AMP है। अक्षुण्ण लक्ष्यीकरण गुणों UBI पेप्टाइड अंशों (जैसे कि UBI (29-41)) को ^{99m}Tc और ^{68}Ga से चिह्नित करने के बाद प्रतिबिम्बन के लिए उपयोग में लाया जाता है। UBI (29-41) में पांच आर्जिनिन और एक लाइसिन की उपस्थिति, ऋणात्मक रूप से आवेशित जीवाणु झिल्ली के साथ स्थिरवैद्युतीय अंतर्क्रिया स्थापित करने के लिए जिम्मेदार है।

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के वैज्ञानिकों के निरंतर प्रयासों के फलस्वरूप रेडियोचिह्नित यूबिक्विसिडिन (UBI) की उपयोगिता, प्रयोगशाला में अच्छे परिणाम मिलने के बाद, अस्पतालों में सीमित नैदानिक परीक्षणों के माध्यम से देखी जा चुकी है। केंद्र के रेडियोभेषज प्रभाग में मौजूदा उपायों को बेहतर बनाने और संक्रमण प्रतिबिम्बन के लिए नए उपायों के विकास हेतु प्रयास निरंतर जारी हैं।

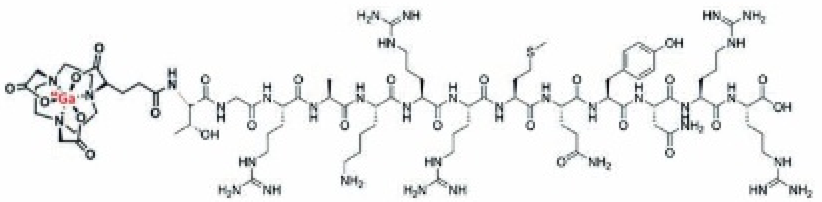

^{68}Ga-नोडागा-यू बी आई (29–41) की रासायनिक संरचना

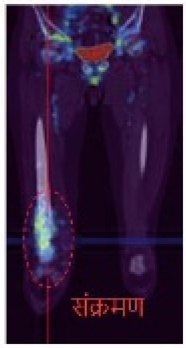

दाहिने ऊरु में संक्रमण की पुष्टि करने वाली ट्रू पॉजिटिव पी ई टी/सी टी स्कैन की नैदानिक छवि

चित्र- 2 ^{68}Ga-नोडागा-UBI (29-41) की रसायनिक संरचना एवं इसके उपयोग से प्राप्त PET/CT नैदानिक छवि

लेखिकागण का परिचय

डॉ. ज्योत्स्ना भट्टमित्रा

सुश्री अनुष्का सचदेवा

डॉ. ज्योत्सना भट्टमित्र, वैज्ञानिक अधिकारी-ई और सुश्री अनुष्का सचदेवा, वैज्ञानिक अधिकारी-सी वर्तमान में, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई के रेडियोभेषज प्रभाग में कार्यरत हैं।

"ऊर्जा का एकमात्र नवीन स्रोत, जिसके प्रति मैं आशान्वित हूँ, वह परमाणु ऊर्जा है।"

— परमाणु ऊर्जा की संभावित भूमिका पर डॉ. भाभा के विचार

शून्य कार्बन उत्सर्जन के लक्ष्य की ओर बढ़ता भारत

प्रभाकर कुमार पाण्डेय

न्यूक्लियर पॉवर कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड, मुंबई

इक्कीसवीं सदी में, किसी भी देश की विकास यात्रा में, ऊर्जा सुरक्षा सर्वोपरि आवश्यकता एवं सुरक्षित भविष्य हेतु मूलभूत आधार बन चुकी है। बढ़ती जनसंख्या, तेज़ औद्योगिक विकास और बिजली की निरंतर बढ़ती मांग के कारण, विश्व आज जलवायु परिवर्तन जैसी गंभीर चुनौती का सामना कर रहा है। ऐसे समय में, सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि विकास की गति बनाए रखते हुए पर्यावरण की सुरक्षा कैसे सुनिश्चित की जाए?

इस वैश्विक प्रयास में, भारत की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। तेज़ी से विकसित होती एक बड़ी अर्थव्यवस्था होने के साथ-साथ भारत ने पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को स्पष्ट रूप से दिखाया है। नेट-ज़ीरो उत्सर्जन के लक्ष्य की दिशा में आगे बढ़ते हुए देश को ऐसी ऊर्जा व्यवस्था की आवश्यकता है जो स्वच्छ, भरोसेमंद और भविष्य की आवश्यकताओं के अनुरूप हो। इसी संदर्भ में, परमाणु ऊर्जा, भारत की विकास यात्रा का एक महत्वपूर्ण आधार बनकर उभर रही है। परमाणु ऊर्जा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि परमाणु ऊर्जा संयंत्रों के प्रचालन के दौरान ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन नगण्य होता है तथा बड़े स्तर पर सतत बिजली उत्पादन संभव होता है। कोयला और अन्य जीवाश्म ईंधनों की तुलना में परमाणु ऊर्जा स्वच्छ एवं विश्वसनीय ऊर्जा का एक प्रभावी स्रोत है, जो पर्यावरण संरक्षण और नेट-ज़ीरो लक्ष्यों की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। वैश्विक स्तर पर कार्बन उत्सर्जन को कम करने के प्रयासों में, परमाणु ऊर्जा एक प्रभावी और दीर्घकालिक समाधान के रूप में सामने आ रही है।

भारत जैसे विशाल और अधिक जनसंख्या वाले देश के लिए भूमि का सही उपयोग भी महत्त्वपूर्ण है। परमाणु ऊर्जा की उच्च ऊर्जा क्षमता के कारण कम भूमि के उपयोग द्वारा अधिक बिजली उत्पादन संभव होता है। भारत के लिए, जहां भूमि संसाधनों पर पहले से ही काफी दबाव है, यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इस दृष्टि से परमाणु ऊर्जा स्वच्छ बिजली उत्पादन के साथ-साथ भूमि संरक्षण में भी मददगार साबित हो रही है।

इसके अलावा, परमाणु ऊर्जा 24x7 रूप से लगातार और भरोसेमंद बिजली उपलब्ध कराती है। सौर (सोलर) और पवन ऊर्जा पर्यावरण के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं, लेकिन उनका उत्पादन मौसम और प्राकृतिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। इसके विपरीत, परमाणु ऊर्जा द्वारा लगातार बिजली का उत्पादन होता है, जिससे विद्युत व्यवस्था स्थायी बनी रहती है। भविष्य में इलेक्ट्रिक वाहनों, हरित हाइड्रोजन, डिजिटल अवसंरचना (इंफ्रास्ट्रक्चर) और उद्योगों की बढ़ती ज़रूरतों को देखते हुए बिजली की उपलब्धता में निरंतरता एवं विश्वसनीयता और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

भारत का परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम केवल वर्तमान ज़रूरतों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है। देश का त्रि-चरणीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम इसी दूरदर्शी सोच का उदाहरण है। पहले चरण में प्राकृतिक यूरेनियम पर आधारित भारी पानी

चित्र-1 नेट-ज़ीरो लक्ष्य हेतु परमाणु ऊर्जा एक सतत स्रोत

दाबित रिएक्टरों (प्रेशराईज़्ड हेवी वॉटर रिएक्टरों; PHWRs) द्वारा औद्योगिक स्तर पर बिजली उत्पादन किया जा रहा है। दूसरे चरण में द्रुत प्रजनक रिएक्टरों (फ़ास्ट ब्रीडर रिएक्टरों; FBRs) के माध्यम से नाभिकीय ईंधन संसाधनों के बेहतर उपयोग पर कार्य किया जा रहा है। इस दिशा में, वर्ष 2026 में तमिलनाडु के कल्पाक्कम स्थित 500 मेगावाट विद्युत क्षमता वाले प्रोटोटाइप फ़ास्ट ब्रीडर रिएक्टर (PFBR) की प्रथम क्रांतिकता एक महत्त्वपूर्ण कदम है। तीसरा चरण भारत में उपलब्ध विशाल थोरियम संसाधनों के उपयोग पर आधारित है, जो भविष्य में देश की ऊर्जा आत्मनिर्भरता को और मज़बूत बनाएगा।

भारत द्वारा अपनाई गई 'बंद ईंधन चक्र (क्लोज़्ड फ्यूल सायकल)' प्रणाली भी परमाणु ऊर्जा के सतत उपयोग को दर्शाती है। प्रयुक्त ईंधन के पुनःप्रसंस्करण (रिप्रोसेसिंग) और उन्नत अपशिष्ट प्रबंधन तकनीकों के माध्यम से संसाधनों का बेहतर उपयोग सुनिश्चित किया जा रहा है। यह व्यवस्था ऊर्जा सुरक्षा के साथ-साथ पर्यावरणीय ज़िम्मेदारी को भी मज़बूत करती है। समय के साथ परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में नई तकनीकों का विकास भी तेज़ी से हो रहा है। 'स्माल मॉड्यूलर रिएक्टर (SMR)' भविष्य में दूरस्थ और संसाधन-सीमित क्षेत्रों के लिए ऊर्जा समाधान प्रदान कर सकते हैं। इसी प्रकार, 'त्वरक-चालित प्रणाली (एक्सिलिरेटर ड्रिवन सिस्टम; ADS)' जैसी तकनीकें रेडियोधर्मी अपशिष्ट प्रबंधन को और अधिक सुरक्षित बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण

संभावनाएँ प्रस्तुत कर रही हैं। 'नाभिकीय संलयन (न्यूक्लियर फ्यूज़न)' को भी भविष्य में स्वच्छ ऊर्जा के एक बड़े स्रोत के रूप में देखा जा रहा है। परमाणु विज्ञान का उपयोग केवल बिजली उत्पादन तक सीमित नहीं है। स्वास्थ्य सेवाओं में कैंसर उपचार, कृषि क्षेत्र में खाद्य संरक्षण और पर्यावरण-अनुकूल कीट नियंत्रण, तथा समुद्री जल को पीने योग्य बनाने जैसी प्रक्रियाओं में भी इसका महत्वपूर्ण योगदान है। स्वच्छ ऊर्जा उत्पादन के माध्यम से वायु प्रदूषण में कमी और जैव विविधता संरक्षण में भी यह सकारात्मक भूमिका निभा रहा है।

भारत की परमाणु ऊर्जा यात्रा वैश्विक सहयोग से भी मज़बूत हो रही है। इंटरनेशनल एटॉमिक एनर्जी एजेंसी (IAEA) तथा वर्ल्ड एसोसिएशन ऑफ़ न्यूक्लियर ऑपरेटर्स (WANO) जैसे संगठनों के साथ सहयोग के माध्यम से भारत नाभिकीय संयंत्रों की सुरक्षा, और तकनीकी उत्कृष्टता की दिशा में अपनी प्रतिबद्धता मज़बूत कर रहा है। आज परमाणु ऊर्जा केवल बिजली उत्पादन का माध्यम नहीं, बल्कि स्वच्छ, सुरक्षित और आत्मनिर्भर भारत के निर्माण की मज़बूत आधारशिला बनती जा रही है। यह ऊर्जा सुरक्षा, पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास, तीनों के बीच संतुलन स्थापित करने की क्षमता रखती है।

नेट-ज़ीरो की दिशा में भारत की यात्रा केवल पर्यावरणीय लक्ष्य नहीं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित और बेहतर भविष्य सुनिश्चित करने का संकल्प है। इस परिवर्तनकारी यात्रा में परमाणु ऊर्जा एक ऐसी महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में उभर रही है, जो विकास और प्रकृति के बीच संतुलन बनाए रखते हुए भारत को स्वच्छ ऊर्जा के नए युग की ओर आगे बढ़ा रही है। स्वच्छ ऊर्जा से संचालित आत्मनिर्भर भारत की इस यात्रा में परमाणु ऊर्जा केवल आज की आवश्यकता नहीं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के प्रति हमारी ज़िम्मेदारी भी है।

लेखक का परिचय

श्री प्रभाकर कुमार पाण्डेय

श्री प्रभाकर कुमार पाण्डेय वर्तमान में, न्यूक्लियर पॉवर कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड, मुंबई के कॉर्पोरेट योजना एवं कॉर्पोरेट संचार निदेशालय में कार्यरत हैं।

"प्रचुर ऊर्जा आपूर्ति आधुनिक सभ्यता की पहली आवश्यकता है।"

- वर्ष 1957 में परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठान, ट्रॉम्बे के उद्घाटन समारोह में डॉ. होमी भाभा के संबोधन की एक प्रमुख पंक्ति

प्रेशर कुकर में नैनोकणों का संश्लेषण

डॉ. अरुणा ज्योति कोरा और डॉ. वेंकटा बलरामा कृष्णा मुल्लापूड़ि

राष्ट्रीय पदार्थ संघटनात्मक अभिलक्षणन केन्द्र, भा.प.अ. केंद्र, हैदराबाद

नैनोप्रौद्योगिकी के बहु-आयामी विकास एवं विस्तार ने आज जीवन के लगभग हर पहलू को प्रभावित किया है। नैनोपदार्थों का विभिन्न आकृतियों एवं आकारों में सुलभता से उपलब्ध होना नैनोप्रौद्योगिकी के विस्तार के लिए आवश्यक है। अनेक प्रगत अनुप्रयोगों जैसे कि उन्नत औषधियों, चिकित्सीय प्रतिबिंबन, जल-शुद्धिकरण, पर्यावरण संरक्षण, सौर पैनलों के निर्माण, इत्यादि में धात्विक नैनोकणों का बहुतायत से उपयोग होता है। धात्विक नैनोकणों के संश्लेषण के लिए प्रयुक्त विधियों में जलतापीय (हाइड्रोथर्मल) विधि महत्वपूर्ण है। इस स्वच्छ एवं सरल विधि द्वारा समायोज्य आकार एवं आकृति के नैनोकणों को मध्यम तापमान पर, बिना अतिरिक्त पिसाई / प्रसंस्करण की आवश्यकता के, व्यावसायिक पैमाने पर बनाया जा सकता है।

आमतौर पर जलतापीय (हाइड्रोथर्मल) संश्लेषण, ऑटोक्लेव नामक एक उच्च-दाब उपकरण में किया जाता है, जो प्रायः टेफ्लॉन के आंतरिक अस्तर के साथ स्टील अथवा अन्य उपयुक्त मिश्रधातु से बना होता है। नैनोकणों के संश्लेषण के लिए, ऑटोक्लेव के विकल्प के रूप में, विद्युतीय प्रेशर-कुकर के उपयोग के संदर्भ भी मिलते हैं। इस दिशा में और अधिक सरलीकरण एवं अन्य आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए, धात्विक नैनोकणों के संश्लेषण हेतु जलतापीय रिएक्टर के रूप में, विद्युतीय प्रेशर कुकर के स्थान पर घरेलू स्टोवटॉप प्रेशर कुकर का इस्तेमाल किया गया है।

स्टोवटॉप प्रेशर कुकर तो अब लगभग हर भारतीय रसोईघर का एक अनिवार्य हिस्सा है, जो भली-भांति स्थापित संरक्षा-सुविधाओं, जैसे कि नियंत्रित गैस्केट मोचन प्रणाली, धातु से बने अतिदाब संरक्षा प्लग, दाब नियंत्रण वाल्व, इत्यादि के साथ मिलता है। यह एक टिकाऊ उपकरण है जो न केवल तेज़ी से दबाव छोड़ता है, बल्कि विद्युतीय प्रेशर कुकर की तुलना में उच्च दाब पर संचालित होने से अभिक्रिया के समय को भी कम करता है। कई प्रकार की तकनीकी विविधताओं जैसे कि आयतन, आकार, ढक्कन का प्रकार, संरचना पदार्थ (एल्यूमीनियम, स्टील), तापक आधार (इंडक्शन, गैर-इंडक्शन), इत्यादि के साथ यह एक सामान्य उपभोक्ता वस्तु के रूप में बड़ी आसानी से बाज़ार में उपलब्ध है। एक टिकाऊ पात्र के रूप में इसे सीधे आग (पारंपरिक अथवा एल.पी.जी. चूल्हा) अथवा इंडक्शन स्टोवटॉप दोनों पर ही गर्म किया जा सकता है। विद्युतीय प्रेशर कुकर की तुलना में यह किफ़ायती भी है। जैव-विज्ञान प्रयोगशालाओं में, चिकित्सालयों एवं अस्पतालों में सामान्यतया उपयोग में आने वाला ऑटोक्लेव लगभग 15 पीएसआई के जलवाष्प दाब एवं 121°C तापमान पर संचालित होता है और कोशिका कल्चर माध्यम, प्लास्टिक एवं कांच के बर्तनों, चिकित्सीय सुईओं, इत्यादि के विसंक्रमण के लिए सर्वाधिक इस्तेमाल किया जाता है। ऐसे ऑटोक्लेव के उपलब्ध न होने पर घरेलू स्टोवटॉप प्रेशर कुकर का उपयोग भी पाया जाता है। इसकी विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए, प्रस्तुत लेख में धात्विक नैनोकणों के आसान संश्लेषण के लिए जलतापीय रिएक्टर के रूप में घरेलू स्टोवटॉप प्रेशर कुकर के उपयोग एवं प्राप्त परिणामों का संक्षिप्त वर्णन किया गया है।

विभिन्न धात्विक नैनोकणों जैसे कि चांदी (सिल्वर; Ag), स्वर्ण (गोल्ड; Au), पैलेडियम (Pd), प्लैटिनम (Pt) के संश्लेषण के लिए हमें संबंधित धातु-निहित रसायन जैसे कि सिल्वर नाइट्रेट ($AgNO_3$), क्लोरोऑरिक अम्ल ($HAuCl_4$), पैलेडियम क्लोराइड ($PdCl_2$), क्लोरोप्लैटिनिक अम्ल (H_2PtCl_6) के साथ-साथ धातु आयनों के अपचयन तथा उत्पन्न नैनोकणों को स्थायीकृत

करने के लिए क्रमशः अपचायक (रिड्यूसिंग) और स्थिरीकरण (स्टेबिलाईज़िंग) पदार्थ की आवश्यकता होती है। इसके लिए, विभिन्न प्राकृतिक अपचायक एवं स्थिरीकरण पदार्थों जैसे कि पौधे के गोंद (कोंडागोगु, घट्टी, ओलीबैनम, ट्रागाकैंथ), बैक्टीरियल गोंद ज़ैंथन, चावल की पत्ती के अर्क़, बीज के अर्क़, इत्यादि का उपयोग किया जा सकता है।

प्रेशर कुकर में धात्विक नैनोकण संश्लेषण को निम्न चरणों में किया गया - सर्वप्रथम बोरोसिलिकेट कांच की ढक्कनदार बोतलों में धातु-निहित रसायन (सिल्वर नाइट्रेट / क्लोरोऑरिक अम्ल / पैलेडियम क्लोराइड / क्लोरोप्लैटिनिक अम्ल) एवं अपचायक/स्थिरक (चावल की पत्ती के अर्क़ / गोंद / ट्रागाकैंथ / कोंडागोगु / घट्टी) का जलीय मिश्रण / घोल तैयार किया गया। इन बोतलों को पानी से भरे बोरोसिलिकेट काँच के बीकर में रखा गया जिसमें पानी का स्तर बोतल के घोल से थोड़ा अधिक था। इस बीकर को पर्याप्त मात्रा में पानी से भरे प्रेशर कुकर के अंदर रखा गया। प्रेशर कुकर के गैस्केट युक्त ढक्कन को बंद करके (बिना सीटी लगाए) उसे एलपीजी स्टोव पर तेज़ आँच पर रखा गया। जब कुकर की सीटी के छिद्र से भाप बाहर निकलने लगी, तो उसे सीटी (दाब नियंत्रण वज़नी वाल्व) लगा कर बंद कर दिया गया। एक बार सीटी बजने के बाद, आंच को धीमा कर दिया गया और अभिक्रिया की अवधि नोट की गई। लगभग 30 मिनट के बाद आँच बंद कर दी गई एवं कुकर को स्टोवटॉप से हटा कर कमरे के तापमान तक ठंडा होने दिया गया। ठंडा होने के बाद, बीकर के साथ बोतलों को बाहर निकाला गया एवं संश्लेषित उत्पाद का विश्लेषण किया गया (चित्र -1)।

संश्लेषित उत्पाद का विश्लेषण

प्रेशर कुकर पर आधारित ऑटोक्लेविंग से बने उत्पाद (धात्विक नैनोकणों) को निम्न तरीकों से जांचा गया - ऑटोक्लेविंग के बाद प्राप्त बोतलों के अभिक्रिया मिश्रण का रंग बिल्कुल बदला हुआ पाया गया, जो चांदी (सिल्वर; Ag), स्वर्ण (गोल्ड, Au), पैलेडियम (Pd) एवं प्लैटिनम (Pt) युक्त

चित्र -1 प्रेशर कुकर में धात्विक नैनोकणों के संश्लेषण हेतु विभिन्न प्रक्रिया चरण

मिश्रण/घोल के लिए क्रमशः पीला, हल्का गुलाबी, भूरा एवं काला पाया गया (चित्र -1)। कक्ष तापमान पर उक्त मिश्रणों पर मापे गए पराबैंगनी-दृश्य प्रकाश अवशोषण वर्णक्रमों (UV-Vis स्पेक्ट्रा) में चांदी और स्वर्ण के लिए क्रमशः 426 नैनोमीटर (nm) और 521 नैनोमीटर (nm) पर स्पष्ट अवशोषण संकेत देखे गए, जबकि पैलेडियम (Pd) एवं प्लैटिनम (Pt) युक्त दोनों मिश्रणों के लिए अस्पष्ट विस्तृत सतत अवशोषण संकेत देखा गया (चित्र -2)।

पारगमन इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी (ट्रांसमिशन इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप; TEM) द्वारा उत्पादों के अध्ययन से चांदी (Ag), स्वर्ण (Au), पैलेडियम (Pd) एवं प्लैटिनम (Pt) के क्रमशः 16 नैनोमीटर, 12 नैनोमीटर, 7 नैनोमीटर एवं 5

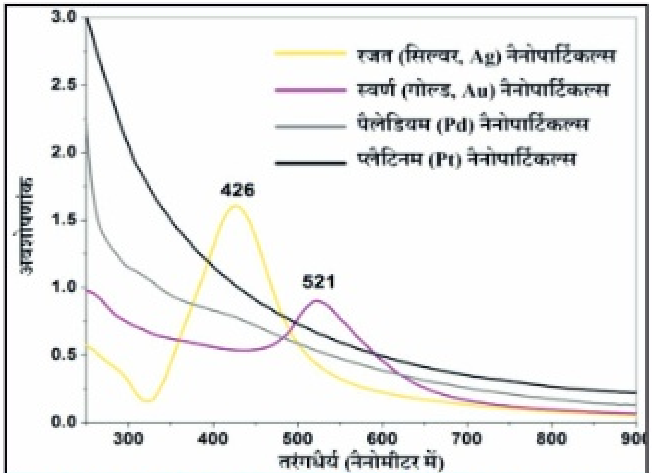

चित्र -2 संश्लेषित धात्विक नैनोकणों के पराबैंगनी-दृश्य प्रकाश अवशोषण वर्णक्रम (स्पेक्ट्रा)

नैनोमीटर आकार के लगभग गोलाकार आकृति के नैनोकणों को देखा गया (चित्र -3)।

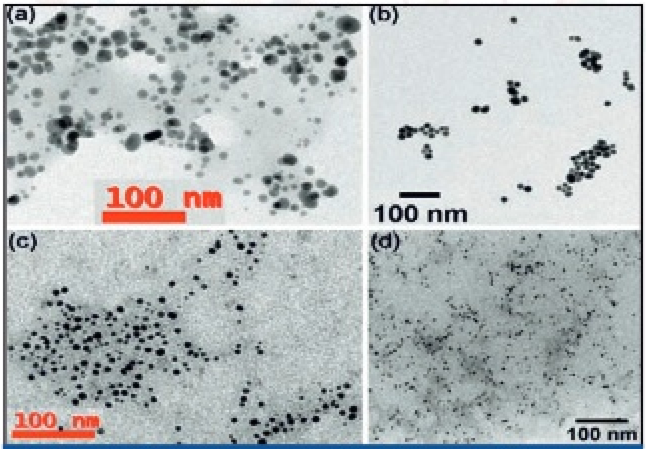

चित्र -3 ट्रांसमिशन इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप (TEM) में दिखाई दिए नैनोकणों के चित्र: (a) Ag NP, (b) Au NP, (c) Pd NP और (d) Pt NP

घरेलू स्टोवटॉप प्रेशर कुकर को एक जलतापीय रिएक्टर के रूप में उपयोग करके प्राप्त उत्पादों (संश्लेषित नैनोकणों) का पूरा विवरण तालिका-1 में दिखाया गया है। इन नैनोकणों का संभावित उपयोग जीवाणुनाशक, कवकनाशी, एंटीऑक्सीडेंट, उत्प्रेरक, वर्णमितीय संवेदक, औषधि-वाहक, इत्यादि के रूप में किया जा सकता है।

प्रेशर कुकर संश्लेषण के दौरान पालन की जाने वाली महत्वपूर्ण सावधानियां

वर्णित विधि द्वारा धात्विक नैनोकणों के संश्लेषण के समय, लक्षित उत्पादों को सुरक्षित रूप से प्राप्त करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण सावधानियों का पालन करना अत्यावश्यक है। सर्वप्रथम प्रयुक्त अभिकारकों (धात्विक यौगिकों, अपचायक एवं स्थिरीकरण पदार्थ) के समुचित मिश्रण को शुद्ध जल में पूर्णतया विलयित करना (अथवा फैलाना) सुनिश्चित किया जाना चाहिए। विसंक्रमित जीवाणुरहित विलायक में तैयार किए गए सांद्र विलयनों / मिश्रणों (स्टॉक घोलों) को अपारदर्शी अथवा गहरे रंग की शीशियों में विभाजित कर निम्न तापमान (4°C) पर संग्रहित किया जाना चाहिए।

प्रेशर कुकर में समुचित ऊष्मा-विनिमय के लिए, कुकर एवं काँच के बीकर दोनों में पानी का पर्याप्त स्तर होना चाहिए। इस प्रकार, कुकर में काँच के बर्तनों की स्थिति भी स्थिर रहती है। बीकर में रखे जाने वाली मिश्रण (घोल)-युक्त काँच की बोतलों के ढक्कन ढीले लगे होने चाहिए एवं कुकर के अंदर भी पर्याप्त खाली जगह (वायु) छोड़ी जानी चाहिए ताकि भाप आसानी से बाहर निकल सके और अत्यधिक दाब बनने या बोतलों को टूटने से बचाया जा सके। ऑटोक्लेविंग पूर्ण होने के बाद, प्रेशर कुकर को कक्ष तापमान तक पूरी तरह से ठंडा करने के बाद ही सावधानी से खोला जाना चाहिए ताकि भाप से जलने और दाबीय विस्फोट से बचा जा सके। प्रत्येक प्रयोग से पहले अनिवार्य रूप से प्रेशर कुकर के सभी घटकों जैसे कि ढक्कन, गैस्केट, सुरक्षा प्लग, वेंट पाइप और दाब नियंत्रण वज़नी वाल्व (सीटी) की जाँच की जानी चाहिए। प्रत्येक प्रयोग के बाद प्रेशर कुकर को भली-भांति साफ करके शुष्क रूप में रखा जाना चाहिए ताकि उस पर कोई परत न जमे और अगले

तालिका -1 घरेलू स्टोवटॉप प्रेशर कुकर में संश्लेषित धात्विक नैनोकणों का विवरण

धातु नैनोकण	धात्विक रसायन	अपचायक और स्थिरक	नैनोकणों के घोल का रंग	अवशोषण संकेत (nm)	औसत कण आकार (nm)
सिल्वर (Ag)	सिल्वर नाइट्रेट ($AgNO_3$)	चावल पत्ती के अर्क़	पीला	426	16
गोल्ड (Au)	क्लोरोऑरिक अम्ल ($HAuCl_4$)	गोंद ट्रागाकैंथ	हल्का गुलाबी	521	12
पैलेडियम (Pd)	पैलेडियम क्लोराइड ($PdCl_2$)	गोंद कोंडागोगु	भूरा	विस्तृत सतत अवशोषण	7
प्लेटिनम (Pt)	क्लोरोप्लैटिनिक अम्ल (H_2PtCl_6)	गोंद घट्टी	काला	विस्तृत सतत अवशोषण	5

प्रयोगों में भी समुचित ऊष्मा विनिमय सुनिश्चित हो सके। इसके अतिरिक्त, एलपीजी सिलेंडर संबंधित और इंडक्शन टॉप संबंधी सभी महत्वपूर्ण प्रयोगशाला संरक्षा नियमों एवं सावधानियों का पालन किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

विभिन्न प्रकार के धात्विक नैनोकणों के संश्लेषण के लिए घरेलू स्टोवटॉप प्रेशर कुकर को एक सरल एवं किफायती उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। यह एक आसानी से उपलब्ध, टिकाऊ और सस्ता उपकरण है जिसके प्रचालन में बिजली की आवश्यकता नहीं है। प्रेशर कुकर में अंतर्निहित संरक्षा विशेषताओं के कारण नैनो-पदार्थों के संश्लेषण के लिए यह एक उपयोगी जलतापीय रिएक्टर के रूप में कार्य करता है। यह एक सरल, पर्यावरण-अनुकूल एवं हरित संश्लेषण विधि है। एक ही प्रक्रिया-चरण में नैनोकणों के संश्लेषण एवं रोगाणुनाशन (विसंक्रमण) होने के दोहरे लाभ से समय और ऊर्जा, दोनों की बचत होती है। शुद्ध जल को विलायक एवं भाप बनाने के लिए उपयोग में लाने से यह विधि पर्यावरण के अनुकूल है। इस विधि से संश्लेषित नैनोकण मूल रूप से रोगाणुरहित होने के कारण जीवे (इन-विवो) एवं पात्रे (इन-विट्रो), दोनों ही प्रकार से चिकित्सा अनुप्रयोगों के लिए उपयुक्त होते हैं। प्रेशर कुकर का एक जलतापीय रिएक्टर के रूप सरल एवं सुलभ उपयोग, सीमित संसाधनों युक्त शैक्षणिक संस्थानों, छोटी प्रयोगशालाओं, नए उद्यमों, इत्यादि में नैनोकणों के संश्लेषण के प्रदर्शन और अनुभव प्राप्त करने में उपादेय है।

चेतावनी

इस लेख में दी गई जानकारी से संबंधित प्रयोग को समुचित सुरक्षा-प्रणाली युक्त प्रयोगशालाओं में विषय-विशेषज्ञों के मार्ग-निर्देशन में ही दोहराए जाने चाहिए। किसी भी परिस्थिति में, इस प्रकार के प्रयोग प्रयोगशाला से इतर (किसी भी सामान्य स्थल पर) नहीं किए जाने चाहिए।

आभार

लेखकगण, इस लेख की संरचना में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सहयोग एवं मार्गदर्शन देने वाले सभी व्यक्तियों विशेषकर डॉ. कुलमणि दाश, प्रभागाध्यक्ष राष्ट्रीय पदार्थ संघटनात्मक अभिलक्षणन केन्द्र (एनसीसीसीएम), हैदराबाद से प्राप्त सतत समर्थन के लिए कृतज्ञता-पूर्वक आभार व्यक्त करते हैं।

लेखकगण का परिचय

डॉ. अरुणा ज्योति कोरा

डॉ. वेंकटा बलरामा कृष्णा मुल्लापूड़ि

डॉ. अरुणा ज्योति कोरा, वैज्ञानिक अधिकारी-जी और डॉ. वेंकटा बलरामा कृष्णा मुल्लापूड़ि, वैज्ञानिक अधिकारी -एच वर्तमान में, भापअकें के हैदराबाद स्थित राष्ट्रीय पदार्थ संघटनात्मक अभिलक्षणन केन्द्र (एनसीसीसीएम) में कार्यरत हैं।

प्लाज़्मा फोकस संलयन - गैर-रेडियोधर्मी बहु-विकिरण स्रोत

डॉ. राम निरंजन

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

विकिरण का उपयोग नियमित रूप से मानवीय हित से संबंधित विविध अनुप्रयोगों में किया जाता है, जिसमें खाद्य उत्पादों का संरक्षण, स्वास्थ्य देखभाल संबंधित उत्पादों का विसंक्रमण, कैंसर के उपचार के लिए रेडियोथेरेपी, औद्योगिक नमूनों में ख़राबी के सकल आकलन के लिए अविनाशी परीक्षण, उच्च उपज देने वाली फसलों की किस्मों का विकास, इत्यादि शामिल हैं। इन अनुप्रयोगों में आमतौर पर इस्तेमाल किए जाने वाले विकिरण स्रोत रेडियोधर्मी सुवाह्य (पोर्टेबल) स्रोत होते हैं जैसे कोबाल्ट (^{60}Co) और सीज़ियम (^{137}Cs), आदि गामा-किरण उत्सर्जक के रूप में तथा, न्यूट्रॉन उत्सर्जक के रूप में मुख्यतः अमेरिशियम-बेरिलियम (^{241}Am-Be), प्लूटोनियम-बेरिलियम (Pu-Be), केलिफ़ोर्नियम (^{252}Cf), आदि। ये सारे स्रोत सतत विकिरण उत्सर्जित करते हैं इसलिए सामान्यत: इन विकिरण स्रोतों को सीलबंद रखा जाता है और अनुप्रयोग के समय इन्हें सावधानीपूर्वक उपयोग में लाया जाता है। इनके अलावा, प्रयोगशाला आधारित स्रोत जैसे प्रोटॉन और इलेक्ट्रॉन किरण के लिए त्वरक यंत्र और त्वरक यंत्र-आधारित न्यूट्रॉन और उच्च ऊर्जा एक्स-किरण (एक्स-रे) का उपयोग भी ऐसे उद्देश्यों के लिए किया जाता है। दूसरी ओर, सभी प्रकार के उपयुक्त विकिरण एक ही उपकरण का उपयोग करके उत्पन्न किए जाते हैं, जो कि प्लाज़्मा फोकस उपकरण के रूप में जाने जाते हैं। यह उपकरण चुंबकीय परिसीमन संलयन (मैग्नेटिक कन्फाइनमेंट फ्यूज़न) और जड़त्वीय परिसीमन संलयन (इनर्शियल कन्फाइनमेंट फ्यूज़न) के जैसे ही प्लाज़्मा फोकस संलयन पर आधारित हैं। यह उपकरण उच्च ऊर्जा एक्स-किरण, आपेक्षिकीय इलेक्ट्रॉन और उच्च ऊर्जा आयन किरण के साथ-साथ एकल-ऊर्जा (2.45 मेगा-इलेक्ट्रॉन वोल्ट) के तीव्र न्यूट्रॉन का एक विख्यात एवं विपुल बहु-विकिरण स्रोत है| इससे न्यूट्रॉन का उत्पादन तभी होता है जब इसे ड्यूटेरियम गैस (D_2) से भरकर संचालित किया जाता है। यह एक स्पंदित (पल्स्ड) विकिरण स्रोत है जो सिर्फ संचालित किए जाने पर ही विकिरण उत्पन्न करता है अन्यथा यह निष्क्रिय अथवा गैर-रेडियोधर्मी रहता है। इसलिए, इसे सीलबंद रखने की भी आवश्यकता नहीं होती है।

प्लाज़्मा फोकस उपकरण में प्लाज़्मा का उत्पादन गैस (दाब = कुछ मिलीबार) से भरे कक्ष में एक संधारित्र बैंक द्वारा उच्च विद्युत धारा (≥ दस किलो-एम्पीयर या अधिक) को द्रुत गति से (कुछ माइक्रोसेकंड (μs) अवधि तक) प्रवाहित कराकर किया जाता है। उच्च विद्युत धारा घनत्व (J) और उसके चुंबकीय क्षेत्र (B) की परस्पर क्रिया से विद्युत चुम्बकीय बल (लॉरेंज बल: $J \times B$) उत्पन्न होता है, जो प्लाज़्मा को नाभिकीय संलयन अभिक्रिया के लिए अनिवार्य घनत्व और तापमान के एक सूक्ष्म बेलन के आकार में संपीड़ित कर देता है जिससे प्लाज़्मा गतिज दाब और चुंबकीय दाब के बीच एक संतुलन स्थपित होता है। चुंबकीय दाब और प्लाज़्मा गतिज दाब के बीच संतुलन की स्थिति को 'प्लाज़्मा फ़ोकस' या 'प्लाज़्मा पिंच' कहा जाता है। प्लाज़्मा फ़ोकस आमतौर पर केवल कुछ दसियों नैनो-सेकंड (ns) तक ही रहता है। प्लाज़्मा फोकस उपकरण के कार्य सिद्धांत का योजनावत चित्र-1 में दिखाया गया है।

प्लाज़्मा फोकस के दौरान, ऊष्मीय ब्रेम्सस्ट्रालंग प्रक्रिया के द्वारा कम ऊर्जा वाली एक्स-किरणें (आमतौर पर लगभग 5 किलो इलेक्ट्रॉनवोल्ट (keV) या उससे कम) उत्पन्न होती है। यदि प्लाज़्मा फोकस उपकरण को ड्यूटेरियम गैस के

साथ संचालित किया जाए तो ड्यूटेरियम आयन के नाभिकीय संलयन अभिक्रिया के द्वारा 2.45 मेगा-इलेक्ट्रॉनवोल्ट (MeV) ऊर्जा के न्यूट्रॉन उत्पन्न होते हैं। ये न्यूट्रॉन समदैशिक होते हैं और इनकी तीव्रता प्रवाहित विद्युत धारा पर निर्भर करती है। तीव्र और उच्च विद्युत धारा से सदैव अधिक न्यूट्रॉन उत्सर्जित होते हैं। प्लाज़्मा फोकस के दौरान, चुम्बक-द्रवगतिकी अस्थिरता (मैग्नेटो हाइड्रोडायनामिक इन्स्टेबिलिटी) तेज़ी से बढ़ती है, जिसके परिणामस्वरूप इसका विघटन हो जाता है। विघटन के दौरान, प्लाज़्मा में उपस्थित इलेक्ट्रॉन और आयन, विकिरण एवं किरण की तीव्र और ऊर्जावान धाराएं विपरीत दिशाओं में त्वरित होते हैं। इलेक्ट्रॉन एनोड की ओर त्वरित होते हैं और आयन उसके विपरीत त्वरित होती है। ठोस एनोड से टकराने पर इलेक्ट्रॉन गैर-ऊष्मीय ब्रेम्सट्रालंग (नॉन-थर्मल ब्रेम्सट्रालंग) प्रक्रिया द्वारा उच्च ऊर्जा एक्स-किरण (सैकड़ों किलो इलेक्ट्रॉनवोल्ट) उत्पन्न करते हैं, साथ ही साथ, आयन परिप्रेक्ष्य प्लाज़्मा/गैस से टकरा कर कणपुंज (बीम)-लक्ष्य नाभिकीय संलयन से न्यूट्रॉन उत्पन्न करते हैं। ये एक्स-किरण और न्यूट्रॉन विषमदैशिक प्रकृति के होते हैं और आयन कणपुंज (बीम) की दिशा में, अन्य दिशाओं की तुलना में ज्यादा ऊर्जा के अधिक न्यूट्रॉन उत्पन्न होते हैं। इसमें

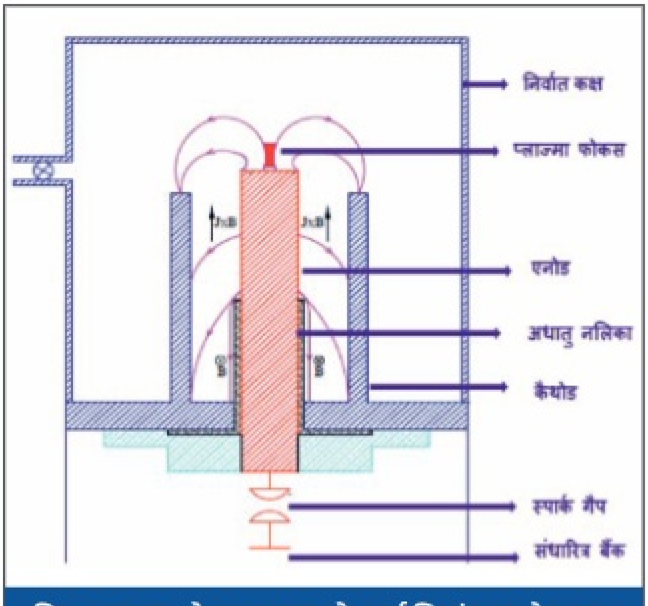

चित्र-1 प्लाज़्मा फोकस उपकरण के कार्य सिद्धांत का योजनावत

कणपुंज (बीम)-लक्ष्य या गैर-तापनाभिकीय न्यूट्रॉन और तापनाभिकीय न्यूट्रॉन का अनुपात 90% से अधिक देखा गया है, जो कि अन्य मुख्य संलयन उपकरणों जैसे टोकामक (TOKAMAK) अर्थात 'मैग्नेटिक कॉइल्स के साथ टॉरॉयडल चैंबर' से अलग है। टोकामक में न्यूट्रॉन केवल तापनाभिकीय संलयन के माध्यम से उत्पन्न होते हैं। प्लाज़्मा फोकस उपकरण में संधारित्र बैंक में भंडारित ऊर्जा को बढ़ा या घटा कर न्यूट्रॉन की उपज को आवश्यकता अनुसार अधिक या कम किया जा सकता है।

प्लाज़्मा फोकस उपकरण

प्लाज़्मा फोकस अन्य संलयन उपकरणों की तुलना में एक सरल संलयन उपकरण है। इसमें समाक्षीय (कोएक्सियल) बेलनाकार धातु इलेक्ट्रोडों की एक जोड़ी होती है। केंद्रीय इलेक्ट्रोड एनोड और बाहरी इलेक्ट्रोड कैथोड की तरह काम करता है। केंद्रीय इलेक्ट्रोड के तल पर एक अधातु नलिका (सिरेमिक पदार्थ जैसे कि क्वार्ट्ज ट्यूब से बनी) रखी जाती है जो एनोड और कैथोड के बीच विद्युतीय अलगाव (इलेक्ट्रिकल आइसोलेशन) प्रदान करती है। साथ ही साथ, यह प्रबल और सुघड़ प्लाज़्मा फोकस गठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एनोड, कैथोड और अधातु नलिका समेत पूरी व्यवस्था (असेंबली) को एक निर्वात कक्ष के अंदर रखा जाता है जिसे हम 'प्लाज़्मा फोकस इकाई' कहते हैं। प्लाज़्मा फोकस इकाई, स्पार्क गैप स्विच और संधारित्र एक साथ मिलकर प्लाज़्मा फोकस उपकरण का निर्माण करते हैं। संधारित्र का उपयोग या तो एकल या बैंक के रूप में किया जाता है जिसमें कई संधारित्र समानांतर जुड़े होते हैं। स्पार्क गैप स्विच का उपयोग करके, संधारित्र बैंक में संग्रहित ऊर्जा प्लाज़्मा फोकस इकाई में निर्वहित की जाती है और प्लाज़्मा फोकस संलयन की प्रक्रिया पूरी होती है। प्लाज़्मा फोकस इकाई या तो संधारित्र बैंक पर सीधे जुड़ी होती है या इसे समाक्षीय केबलों के माध्यम से जोड़ा जाता है। संधारित्र बैंक से सीधे जोड़ने पर प्लाज़्मा फोकस उपकरण सुवाह्य और सुगठित हो जाते हैं जबकि समाक्षीय केबल से जोड़ने

चित्र-2 3.1 किलो-जूल (kJ) ऊर्जा भंडारण क्षमता के संधारित्र पर आधारित सुवाह्य और सुगठित प्लाज़्मा फोकस उपकरण

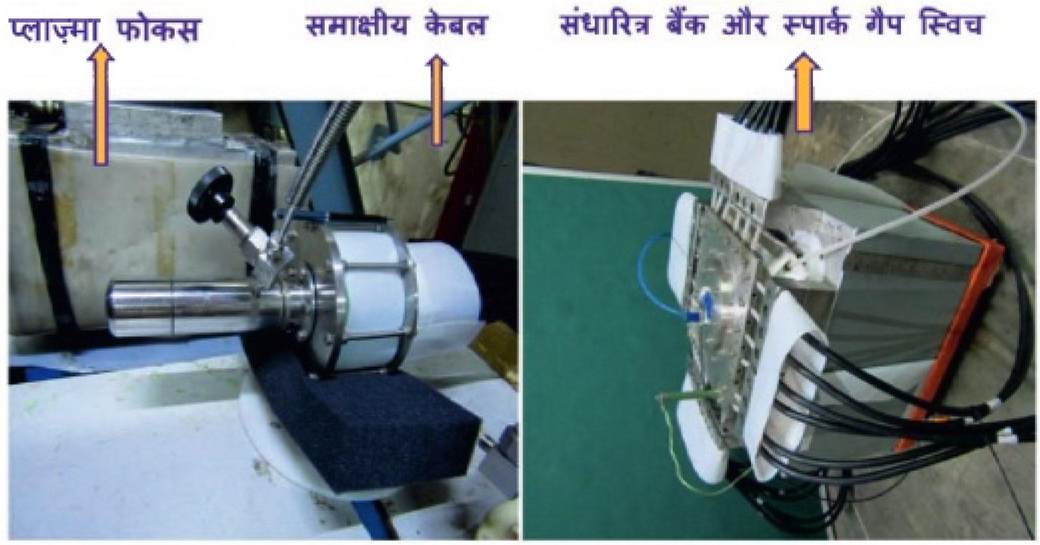

चित्र-3 4.8 किलो-जूल (kJ) ऊर्जा भंडारण क्षमता के संधारित्र बैंक पर आधारित नम्य प्लाज़्मा फोकस उपकरण

पर इसे किसी भी दिशा मे रखने की स्वतंत्रता मिलती है। चित्र-2 में दिखाई गई प्लाज़्मा फोकस इकाई, संधारित्र (ऊर्जा भंडारण क्षमता 3.1 किलो-जूल (kJ)) से सीधे जुड़ी हुई है। चित्र-3 में, एक अन्य प्लाज़्मा फोकस इकाई दिखाई गई है, जो संधारित्र बैंक (ऊर्जा भंडारण क्षमता 4.8 किलो-जूल (kJ) से कई समाक्षीय केबलों द्वारा (प्रत्येक की लंबाई 20 मीटर) जुड़ी हुई है।

प्लाज़्मा फोकस उपकरण के अनुप्रयोग

प्लाज़्मा फोकस उपकरण से उत्सर्जित विकिरण का उपयोग अनुप्रयुक्त अनुसंधान से लेकर पदार्थ विज्ञान तक बहुविषयक क्षेत्रों में किया जाता है। विभिन्न प्लाज़्मा फोकस उपकरणों का उपयोग बड़ी नाभिकीय संलयन मशीनों जैसे कि फ्रांस में बन रही ईटर (ITER) अर्थात 'इंटरनेशनल

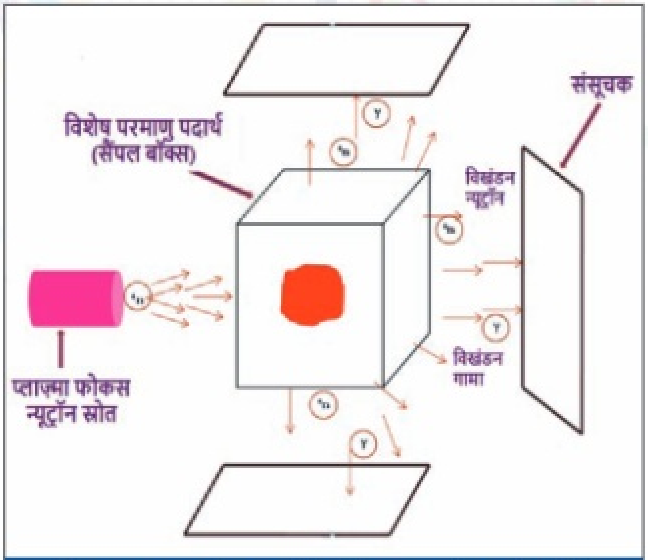

चित्र-4 प्लाज़्मा फोकस न्यूट्रॉन स्रोत का उपयोग करके विशेष परमाणु पदार्थ के अविनाशी और सक्रिय जांच प्रणाली का योजनावत

थर्मोन्यूक्लियर एक्सपेरिमेंटल रिएक्टर' में अंतर्निहित वैज्ञानिक अध्ययन जैसे उच्च घनत्व, उच्च तापमान प्लाज़्मा का गठन, चुम्बक-द्रवगतिकी अस्थिरता की वजह से प्लाज़्मा परिसीमन में व्यवधान, संलयन विकिरण का विभिन्न घटक पदार्थों पर प्रभाव, विभिन्न घटकों के लिए संभावित पदार्थों के व्यवहार का प्रयोगात्मक अनुकरण, विभिन्न नए नैदानिकी परीक्षण, इत्यादि के लिए बड़े पैमाने पर किया जाता है। इसके साथ ही, प्लाज़्मा फोकस उपकरण का उपयोग विशेष परमाणु पदार्थों जैसे यूरेनियम (U) के अविनाशी (नॉन-डेसट्रक्टिव) और सक्रिय जांच के लिए किया जाता है। चित्र-4 में प्लाज़्मा फोकस उपकरण का उपयोग करके विशेष परमाणु पदार्थों की अविनाशी और सक्रिय जांच प्रणाली का योजनावत दिखाया गया है। इसमें प्लाज़्मा फोकस उपकरण से उत्सर्जित न्यूट्रॉन का उपयोग करके विशेष परमाणु पदार्थ में नाभिकीय विखंडन कराया जाता है। तत्पश्चात, नाभिकीय विखंडन उत्पादों जैसे त्वरित न्यूट्रॉन, त्वरित गामा-किरणों, विलंबित न्यूट्रॉन (डिलेड न्यूट्रॉन), विलंबित गामा आदि की गणना उपयुक्त संसूचकों (डिटेक्टर्स) द्वारा की जाती है जो कि निहित विशेष परमाणु पदार्थ के समानुपाती होती है। प्लाज़्मा फोकस उपकरण में नगण्य परिप्रेक्ष्य विकिरण होने कि वजह से इसमें सर्वाधिक संकेत (सिग्नल) और परिप्रेक्ष्य का अनुपात अंतर्निहित होता है। इस कारण से विशेष परमाणु पदार्थ की अतिसूक्ष्म मात्रा भी तुरंत ही आसानी से ज्ञात की जा सकती है।

इसी तरह से प्लाज़्मा फोकस से उत्सर्जित एक्स-किरण का उपयोग पदार्थों की उच्च गुणवत्ता वाली रेडियोग्राफी करने में भी किया जाता है। उदाहरण के लिए, चित्र-5 में प्लाज़्मा फोकस एक्स-किरण द्वारा लिया गया कंप्यूटर रैम का रेडियोग्राफ़ दिखाया गया है। इसके अलावा, प्लाज़्मा फोकस से उत्सर्जित ऊर्जावान और तीव्र आयन किरण का उपयोग विभिन्न पदार्थों (विशेषतः 'ईटर' संलयन रिएक्टर में प्लाज़्मा का प्रत्यक्ष सामना करने वाले घटक पदार्थों) के नमूने की सतह को किरणित करने के बाद हुई क्षति का अध्ययन करने के लिए किया जाता है। चित्र-6 (बाएँ) से स्पष्ट है कि उच्च उर्जा, उच्च तीव्रता की आयन किरण से किरणित नमूने की सतह में बहुत तरह की क्षति उत्पन्न होती है जैसे कि (अ) फफोले, (ब) अतिसूक्ष्म दरारें, (स) सतह का पिघलना और अपक्षरण, इत्यादि। इस प्रकार के अध्ययन से संलयन रिएक्टर के वास्तविक संचालन के दौरान घटक पदार्थों के प्रदर्शन का पूर्वानुमान लगाने में मदद मिलेगी। साथ ही साथ, प्लाज़्मा फोकस उपकरण द्वारा विभिन्न पदार्थों की पतली फिल्म का निक्षेपण भी किया जाता है। चित्र-6 (दाएँ) में, प्लाज़्मा फोकस उपकरण को एसिटिलीन

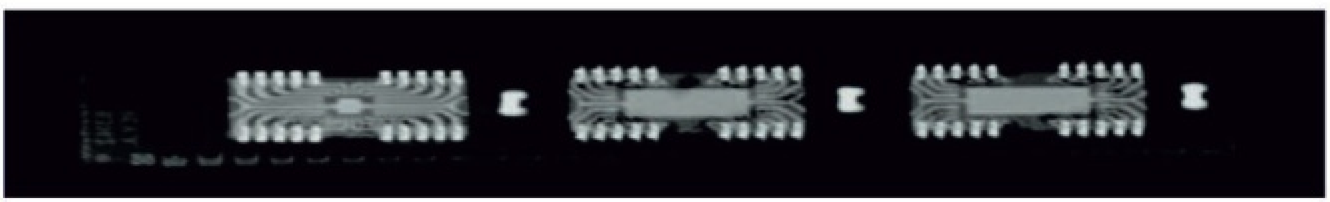

चित्र-5 प्लाज़्मा फोकस एक्स-किरण का उपयोग करके कंप्यूटर रैम की रेडियोग्राफी

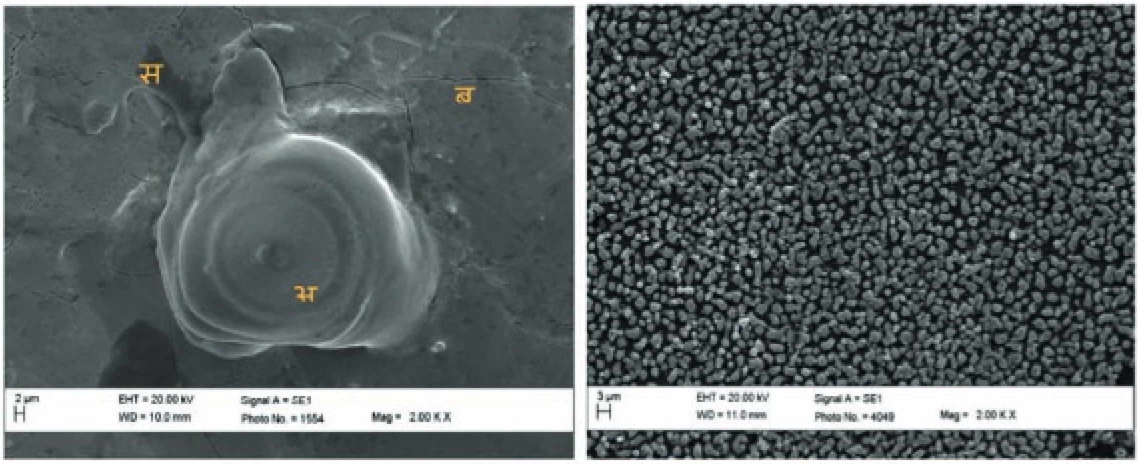

चित्र-6 प्लाज़्मा फोकस आयन से किरणित नमूने की सतह का स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन माइक्रोग्राफ़ (बाएँ) और प्लाज़्मा फोकस का उपयोग करके बनाई गई हीरा-नुमा कार्बन फिल्म का स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन माइक्रोग्राफ़ (दाएँ)

गैस के साथ संचालित करके सिलिकॉन की सतह के ऊपर निक्षेपित हीरा-नुमा कार्बन की पतली फिल्म का सूक्ष्म-आरेख (माइक्रोग्राफ़) दिखाया गया है। इस तरह इस उपकरण का उपयोग किसी भी पदार्थ की पतली फिल्म का किसी भी सतह पर निक्षेपण करने में भी किया जा सकता है।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि, प्लाज़्मा फोकस उपकरण बहु-विकिरण और प्लाज़्मा का एक सरल और विपुल स्रोत है, जिसका उपयोग नाभिकीय संलयन का अनुभव प्राप्त करने के लिए किया जा सकता है, तथा उन कारकों का पता लगाने के लिए किया जा सकता है, जो दूसरे बड़े संलयन उपकरणों में स्व-संचालित नाभिकीय संलयन प्रक्रिया को संभावित रूप से प्रभावित कर सकते हैं। साथ ही साथ, यह विश्वविद्यालयों/ शिक्षण संस्थानों में स्नातक स्तर पर नाभिकीय संलयन और अन्य बहुविषयक क्षेत्रों के प्रशिक्षण एवं अनुभव प्राप्त करने के लिए एक उत्कृष्ट और कम लागत वाला स्रोत भी साबित हो सकता है।

आभार

लेखक, इस लेख की संरचना के विभिन्न चरणों में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सहयोग एवं मार्गदर्शन देने वाले सभी व्यक्तियों विशेषकर डॉ. के. डी. जोशी, अध्यक्ष, अनुप्रयुक्त भौतिकी प्रभाग से प्राप्त सतत समर्थन के लिए कृतज्ञतापूर्वक आभार व्यक्त करते हैं।

लेखक का परिचय

डॉ. राम निरंजन

डॉ. राम निरंजन, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र वर्तमान में, मुंबई के अनुप्रयुक्त भौतिकी प्रभाग में वैज्ञानिक अधिकारी-एफ के पद पर कार्यरत हैं।

पर्यावरण के संरक्षक हैं परमाणु ऊर्जा संयंत्र

योगेन्द्र प्रकाश गौतम

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

भारत में परमाणु ऊर्जा से विद्युत उत्पादन का विकल्प महत्वपूर्ण रूप में उभर रहा है। नाभिकीय ऊर्जा विद्युत संयंत्रों में नाभिकीय विखंडन प्रक्रिया से उत्पन्न रेडियोधर्मी (रेडियोएक्टिव) पदार्थ मुख्यतया संरोधकों (कंटेनमेंट) मे रहते हैं। फिर भी, न्यूनतम एवं पर्यावरणीय दृष्टि से स्वीकार्य स्तर पर रेडियोसक्रिय पदार्थों का जलीय एवं वायुमंडलीय बहिःस्राव होता है जो प्राकृतिक विकिरण मात्रा (डोज़) की तुलना में अत्यंत कम होता है। इन संयंत्रों से बहिःस्रावित रेडियोसक्रियता यद्यपि वातावरण में विकिरण मात्रा (डोज़) को आंशिक रूप से बढ़ाती है किंतु, मानव स्वास्थ्य पर इसका नगण्य प्रभाव पड़ता है। चूँकि, विकिरण की अधिक मात्रा मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव डाल सकती है, इसलिए, परमाणु ऊर्जा प्रौद्योगिकी में विकिरण सुरक्षा के उच्चतम मापदंडों का सदैव पालन किया जाता है।

नाभिकीय ऊर्जा विद्युत संयंत्रों से उत्सर्जित विकिरण मात्रा (डोज़) का मूल्यांकन करने तथा मानव स्वास्थ्य पर इसका प्रभाव जानने के लिए स्रोत की रेडियोसक्रिय मूल मात्रा (रेडियोएक्टिव सोर्स टर्म) एवं इसका स्वरूप, संयंत्र के आस-पास के क्षेत्रों में जनसंख्या वितरण और खान-पान की आदतें, पर्यावरणीय साधनों का जनसामान्य द्वारा उपयोग तथा उस क्षेत्र (स्थान) में रेडियोधर्मिता की विसरणशीलता की जानकारी होना आवश्यक है।

नाभिकीय ऊर्जा से विद्युत उत्पादन के दौरान, मानव तथा पर्यावरण संरक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इसके लिए, एक त्रि-स्तरीय नियंत्रण एवं अनुसरण पद्धति को अपनाया गया है। प्रस्तुत लेख में, भारत में स्थित परमाणु बिजलीघरों में अपनाई गई संरक्षा प्रणालियों का संक्षिप्त विवरण दिया गया है।

अवरोधक

परमाणु बिजलीघरों में उत्पन्न रेडियोधर्मिता को संयंत्र से पर्यावरण तक पहुँचने के लिए चार निम्नलिखित अवरोधकों को पार करना पड़ता है।

- प्रथम अवरोधक - ठोस नाभिकीय ईंधन (यूरेनियम डाईऑक्साइड की गुटिकाएं/पेलेट)
- द्वितीय अवरोधक - ईंधन परिच्छाद (ज़र्केलॉय फ्यूल क्लैड के रूप में धात्विक आवरण)
- तृतीय अवरोधक - दाब नलिका (प्रेशर ट्यूब) और शीतलक (कूलेंट)
- चतुर्थ अवरोधक - दोहरा संरोधन (डबल कंटेनमेंट) एवं विदाबन (दाब न्यूनीकरण) यंत्र

जन-सामान्य की सुरक्षा हेतु संयंत्र के चारों ओर एक अपवर्जित क्षेत्र (उदाहरण के लिए नरौरा परमाणु बिजली घर

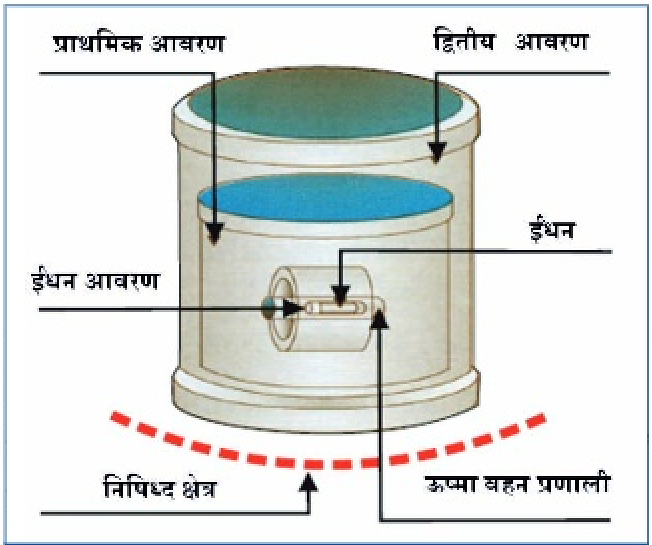

चित्र -1 परमाणु ऊर्जा संयंत्र में रेडियोधर्मिता सीमित करने के अवरोधक

में लगभग 1.6 किलोमीटर व्यासार्ध का घेरा) भी निर्धारित किया जाता है, जिसमें जनता को निवास की अनुमति नहीं दी जाती है। (चित्र-1)

रेडियोधर्मी पदार्थों का बहिःस्राव एवं नियंत्रण

उक्त अवरोधकों द्वारा नाभिकीय ऊर्जा संयंत्र (रिएक्टर) में उत्पन्न हुए अधिकांश विखंडन एवं सक्रियण उत्पादों को संयंत्र के भीतर ही सीमित (संरोधित/कन्टेंड) कर लिया जाता है। तथापि, कुछ मात्रा में अवशिष्ट रेडियोधर्मिता का वातावरण में बहिःस्राव होता है, जिसका मॉनीटरन एवं नियंत्रण संयंत्र के अभिकल्पन (डिज़ाइन) में ही शामिल कर दिया जाता है। इस अवशिष्ट रेडियोधर्मिता को उपयुक्त एवं अनुमत स्तर तक तनुकृत करने के बाद ही वातावरण में विसर्जित किया जाता है। उदाहरणस्वरूप, अल्पायु विखंडन उत्पाद उत्कृष्ट गैसों (नोबल गैस जैसे कि ज़ीनॉन, क्रिप्टॉन, इत्यादि) तथा सक्रियण गैसीय उत्पादों (जैसे कि आयोडीन) को ऊंची चिमनी द्वारा वायुमंडल में छोड़ा जाता है। इसी प्रकार, निम्न स्तरीय रेडियोसक्रियता को तनुकृत करने के बाद जलीय स्रोतों में विसर्जित किया जाता है।

भारत में पर्यावरणीय रेडियोधर्मिता की सीमाएं, परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद (अटॉमिक एनर्जी रेग्युलेटरी बोर्ड) द्वारा निर्धारित की जाती हैं जिसका पूर्ण अनुसरण किया जाता है। परमाणु ऊर्जा संयंत्र के सामान्य प्रचालन के दौरान जलीय स्रोतों एवं वायुमण्डल में विसर्जित किए जाने वाले प्रमुख रेडियोधर्मी पदार्थों का विवरण तालिका- 1 और तालिका-2 में दिया गया है।

वातवरण में विसर्जित किए गए ये रेडियोधर्मी पदार्थ पर्यावरण एवं मानव-स्वास्थ्य पर प्रभाव डालते हैं। इसे समझने के लिए इन पदार्थों के मनुष्यों / जीवों तक पहुँचने के

तालिका - 1 परमाणु ऊर्जा संयंत्र के सामान्य परिचालन में द्रवीय/जलीय उत्सर्जित रेडियोधर्मी नाभिक

रेडियोधर्मी नाभिक	अर्धायु ($t_1/_2$)	विकिरण प्रकार
ट्रिशियम (^{3}T)	12.26 वर्ष	बीटा
मैंगनीज़ (^{54}Mn)	312.5 दिन	गामा
आयरन (^{59}Fe)	44.6 दिन	बीटा
		गामा
कोबाल्ट (^{60}Co)	5.3 वर्ष	बीटा
		गामा
ज़िंक (^{65}Zn)	243.9 दिन	गामा
स्ट्रांशियम (^{89}Sr)	50.5 दिन	बीटा
स्ट्रांशियम (^{90}Sr)	28.7 वर्ष	बीटा
आयोडीन (^{131}I)	8.1 दिन	बीटा
		गामा
सीज़ियम (^{134}Cs)	754.2 दिन	बीटा
		गामा
सीज़ियम (^{137}Cs)	30 वर्ष	बीटा
		गामा

तालिका - 2 परमाणु ऊर्जा संयंत्र के सामान्य परिचालन में गैसीय रेडियोधर्मी उत्सर्जन

रेडियोधर्मी नाभिक	अर्धायु ($t_1/_2$)	विकिरण प्रकार
ट्रिशियम (^{3}T)	12.26 वर्ष	बीटा
आर्गन (^{41}Ar)	1.83 घंटे	बीटा
		गामा
क्रिप्टॉन (^{87m}Kr)	4.4 घंटे	बीटा
		गामा
क्रिप्टॉन (^{87}Kr)	78 मिनट	बीटा
		गामा
आयोडीन (^{131}I)	8.1 दिन	बीटा
		गामा
ज़ीनॉन (^{133}Xe)	5.27 दिन	बीटा
		गामा
ज़ीनॉन (^{135}Xe)	9.13 घंटे	बीटा
		गामा

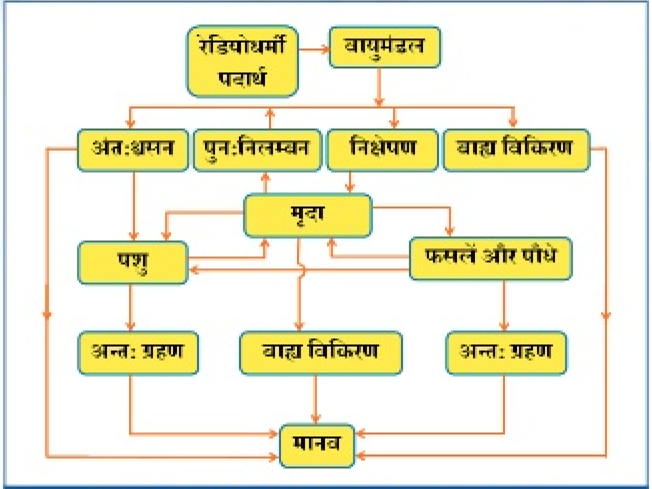

चित्र -2 वायुमंडल में विसर्जित रेडियोधर्मी पदार्थों के मानव तक पहुंचने के संभावित माध्यम

संभावित माध्यमों की जानकारी होना आवश्यक है। चित्र-2 और चित्र-3 में इन्हें रेखांकित किया गया है।

अंतरराष्ट्रीय विकिरण सुरक्षा आयोग (इंटरनेशनल कमीशन ऑन रेडियोलॉजिकल प्रोटेक्शन) की संस्तुति के अनुरूप एईआरबी द्वारा भारत में जनसाधारण के लिए 1 मिलीसीवर्ट (1 mSv) प्रतिवर्ष प्रभावी विकिरण मात्रा (रेडिएशन डोज़) की सीमा निर्धारित की गई है। यह भी प्रावधान है कि विशेष परिस्थितियों में इस सीमा से अधिक प्रभावी डोज़ भी किसी वर्ष में स्वीकार्य है बशर्ते कि लगातार 5 वर्षों का औसत (मध्यमान) प्रभावी 1 मिलीसीवर्ट प्रतिवर्ष से अधिक ना हो।

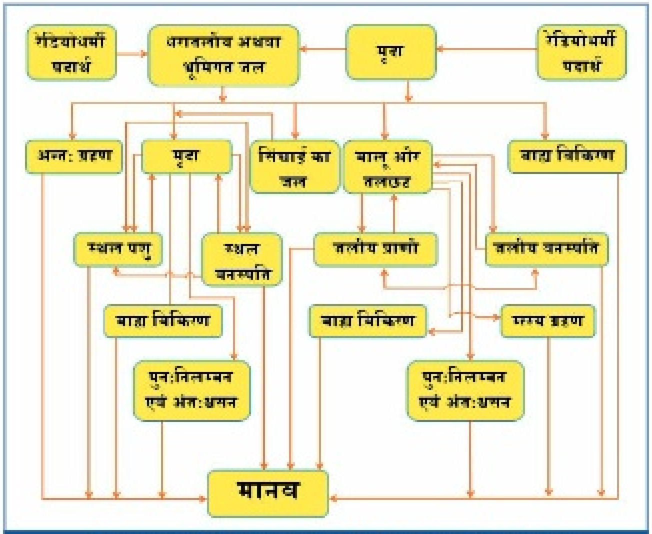

चित्र -3 जलीय/द्रवीय विसर्जित रेडियोधर्मी पदार्थों के मानव तक पहुंचने के संभावित मार्ग

विकिरण स्राव नियंत्रण के लिए, संयंत्र से बहिःस्रावित रेडियोसक्रियता स्तर को प्रभावी वार्षिक मात्रा (डोज़) के अनुरूप परिवर्तित किया जाता है। जैसे कि, रेडियोधर्मिता की प्रतिदिन स्रावित मात्रा या वातावरण में सांद्रता का नियंत्रण। इसके लिए स्थान-विशेष की विसरण क्षमता, पर्यावरणीय घटकों, जनसंख्या वितरण एवं खानपान की आदतों तथा विकिरण मात्रामिति (रेडिएशन डोज़ीमेट्री) का ज्ञान आवश्यक है। उक्त आधार पर निम्नलिखित त्रि-स्तरीय नियंत्रण और अनुसरण पद्धति अपनाई जाती है जिसके अंतर्गत संयंत्र से विसर्जित रेडियोधर्मिता का सर्वेक्षण किया जाता है।

- संयंत्र प्रचालन से स्रावित द्रवों की सीमा का तकनीकी निर्देशन के रूप में प्रतिपादन
- नियमित रूप से स्रोत पर अपशिष्टों के नमूनों (सैम्पल्स) का संग्रहण एवं मॉनीटरन
- पर्यावरणीय सर्वेक्षण हेतु विस्तृत व्यवस्था का निर्धारण एवं अनुपालन

पर्यावरण सर्वेक्षण

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के पर्यावरणीय अनुवीक्षण एवं मूल्यांकन प्रभाग (एनवायरमेंटल मॉनिटरिंग एन्ड असेसमेंट डिविज़न) द्वारा भारत के प्रत्येक नाभिकीय ऊर्जा संबंधी संयंत्र/ स्थल पर पर्यावरण सर्वेक्षण एवं मौसम विज्ञान प्रयोगशाला स्थापित की जाती है, जो अपना कार्य संयंत्र परिचालन से पहले ही प्रारंभ कर देती है तथा पर्यावरणीय रेडियोधर्मिता के वार्षिक और मौसमी आंकड़ों का संकलन करती है। इन प्रयोगशालाओं के मुख्य उद्देश्य निम्नानुसार हैं-

- संयंत्र स्थल पर रेडियोधर्मिता का विस्तृत अध्ययन
- संयंत्र से स्रावित रेडियोधर्मिता से आस-पास की जनता को मिलने वाली संभावित विकिरण डोज़ का मूल्यांकन एवं अनुबद्ध मानकों के पालन का निर्धारण
- संयंत्र के कर्मचरियों एवं जनता के आंतरिक संदूषण का मॉनीटरन

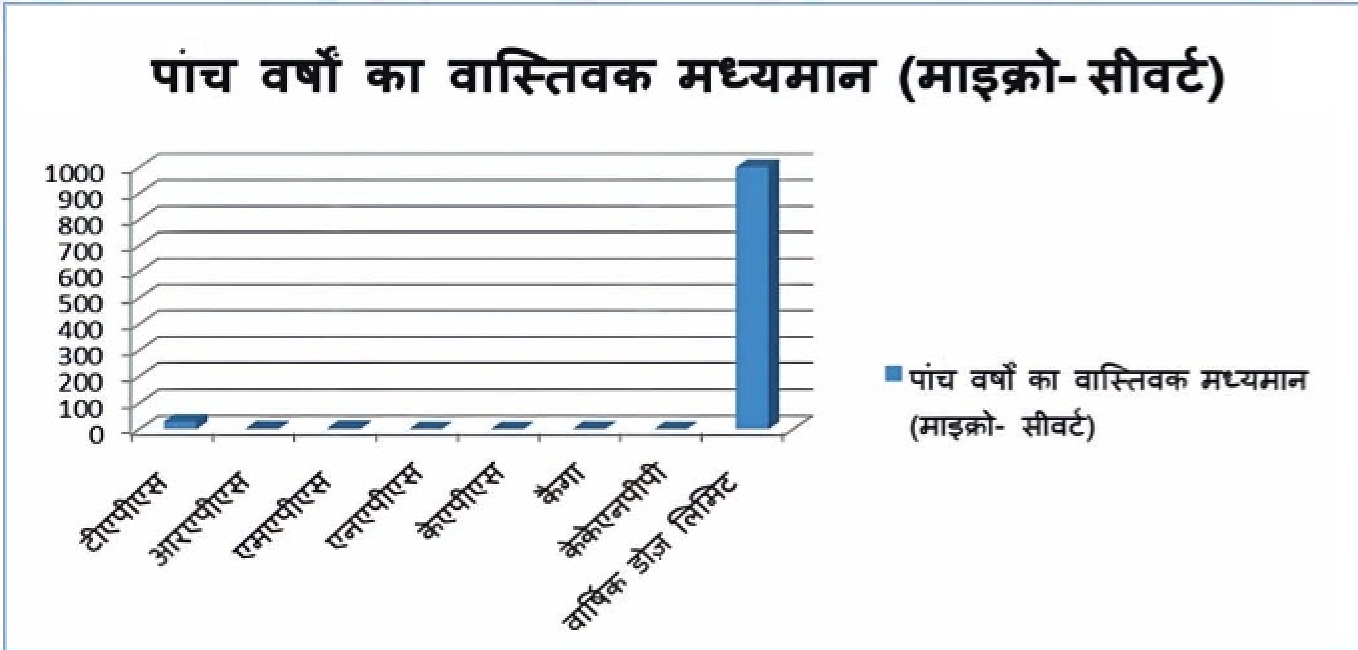

चित्र -4 वर्ष 2017 से 2024 के दौरान भारत के विभिन्न परमाणु उर्जा सयंत्रो से जनसाधारण को मिली मध्यमान विकिरण डोज़

- पर्यावरणीय विसरणशील क्षमता का अध्ययन
- आपातकालीन स्थितियों में (यदि कोई हो तो), पर्यावरणीय सर्वेक्षण

संयंत्र के प्रचालन से पर्यावरण को होने वाले नुकसान का मूल्यांकन संयंत्र से लगभग तीस किलोमीटर तक लिए गए निम्नांकित (तालिका-3) विभिन्न वायुमंडलीय, पृथ्वी-संबंधी एवं जलीय नमूनों में रेडियोधर्मी पदार्थों की सांद्रता के मापन द्वारा किया जाता है।

तालिका - 3 रेडियोधर्मी पदार्थों की सांद्रता के मापन हेतु लिए जाने वाले नमूने (सैम्पल्स)

वायुमंडलीय नमूने	जलीय नमूने	पार्थिव नमूने
वायु में निलंबित सूक्ष्मकण (एरोसोल), वायु में ट्रिशियम, वर्षा जल, शुष्क हवा	मृदा / मिट्टी, दूध, घास, अनाज, सब्जियाँ, फल मांस, बकरे की थायरॉइड ग्रंथि	जल, पेयजल, मछलियां, जलीय पौधे, जल में निलंबित पदार्थ

वर्ष 2017 से 2024 के दौरान, भारत के तारापुर (महाराष्ट्र), रावतभाटा (राजस्थान), कल्पाक्कम (तमिल नाडु), नरौरा (उत्तर प्रदेश), कैगा (कर्नाटक), काकरापार (गुजरात) एवं कुडनकुलम (तमिल नाडु) स्थित नाभिकीय ऊर्जा संयंत्रों के सामान्य प्रचालन के दौरान निषिद्ध क्षेत्र सीमा (संयंत्र से 1.6 किलोमीटर व्यासार्थ दूरी तक) पर जनसाधारण को मिली औसत विकिरण डोज़, निर्धारित सीमा (1 मिली सीवर्ट प्रतिवर्ष) से बहुत ही कम (0.0003% से 2.4%) पायी गई है (चित्र-4)।

यह डोज़, प्राकृतिक रूप से विद्यमान पृष्ठ-भौमिक विकिरण डोज़ (बैकग्राउंड रेडिएशन डोज़) का अल्पांश (0.0002% से 1.2%) ही है। संयंत्र स्थलों के निषिद्ध क्षेत्रों से आगे जनसाधारण को मिली डोज़ और भी कम होती जाती है। विभिन्न प्राकृतिक एवं मानव-निर्मित स्रोतों द्वारा मिलने वाली मध्यमान विकिरण डोज़ को चित्र-5 में दर्शाया गया है।

अंतरराष्ट्रीय विकिरण सुरक्षा आयोग द्वारा निर्धारित विकिरण डोज़ सीमाएं तथा पर्यावरणीय सुरक्षा संबंधी एकत्रित परिणाम-

ICRP के डोज़ सीमा सिद्धांत के निम्न तीन आधार हैं : -

- ऐसा कोई भी उद्योग स्थापित नहीं किया जाएगा जिसके प्रचालन से वास्तविक लाभ न हों
- आर्थिक एवं सामाजिक पहलुओं को ध्यान में रखते हुए सभी उत्सर्जन संभाव्य-न्यून रखे जाएंगे
- समुचित परिस्थितियों में किसी भी व्यक्ति को दिया जाने वाला डोज़ तुल्यांक आयोग द्वारा संस्तुत सीमा से अधिक नहीं होगा

परमाणु ऊर्जा संयंत्र/संस्थापन स्थल पर क्रियान्वित पर्यावरण निगरानी कार्यक्रम के अब तक के परिणामों से यह स्पष्ट है कि इन संयंत्रों/संस्थापनाओं द्वारा जनसामान्य के किसी व्यक्ति को अधिकतम अनुमेय मात्रा से अधिक डोज़ नहीं मिली है। यह भी प्रमाणित हुआ है कि संयंत्र/संस्थापन के प्रचालन से पर्यावरण पर पड़ने वाला प्रभाव अवांछनीय जोख़िम उत्पन्न नहीं करता है। ICRP के डोज़ सीमा सिद्धांत के अनुसार केवल प्रदूषण स्तर की मात्रा को निर्धारित सीमा से कम रखना ही पर्याप्त नहीं हैं अपितु, प्रदूषण को न्यूनतम रखने का सतत प्रयास किया जाना चाहिए। परमाणु ऊर्जा संयंत्रों में विकिरण स्रोतों के नियंत्रण हेतु सतत प्रयास किया जाता है। पर्यावरणीय सुरक्षा संबंधित निगरानी और स्रोत में पारस्परिक क्रिया के प्रारूप को उदाहरणार्थ चित्र-6 में दर्शाया गया है।

आपातकाल में जन-सुरक्षा

नाभिकीय ऊर्जा संयंत्र में असंभाव्य दुर्घटना को रोकने और दुर्घटना हो जाने पर संबंधित दुष्परिणामों को कम करने के लिए भी विशेष सुरक्षा प्रबंध तैयार रहते हैं। प्रत्येक संयंत्र पर आपातकालीन कार्य योजना तैयार की जाती है, जिसे निषिद्ध क्षेत्र के भीतर संयंत्र-निदेशक के, एवं इसके बाहर ज़िला-प्रशासन के नियंत्रण में कार्यान्वित किया जाता है। विकिरण से जन-सुरक्षा हेतु एईआरबी ने आपातकालीन

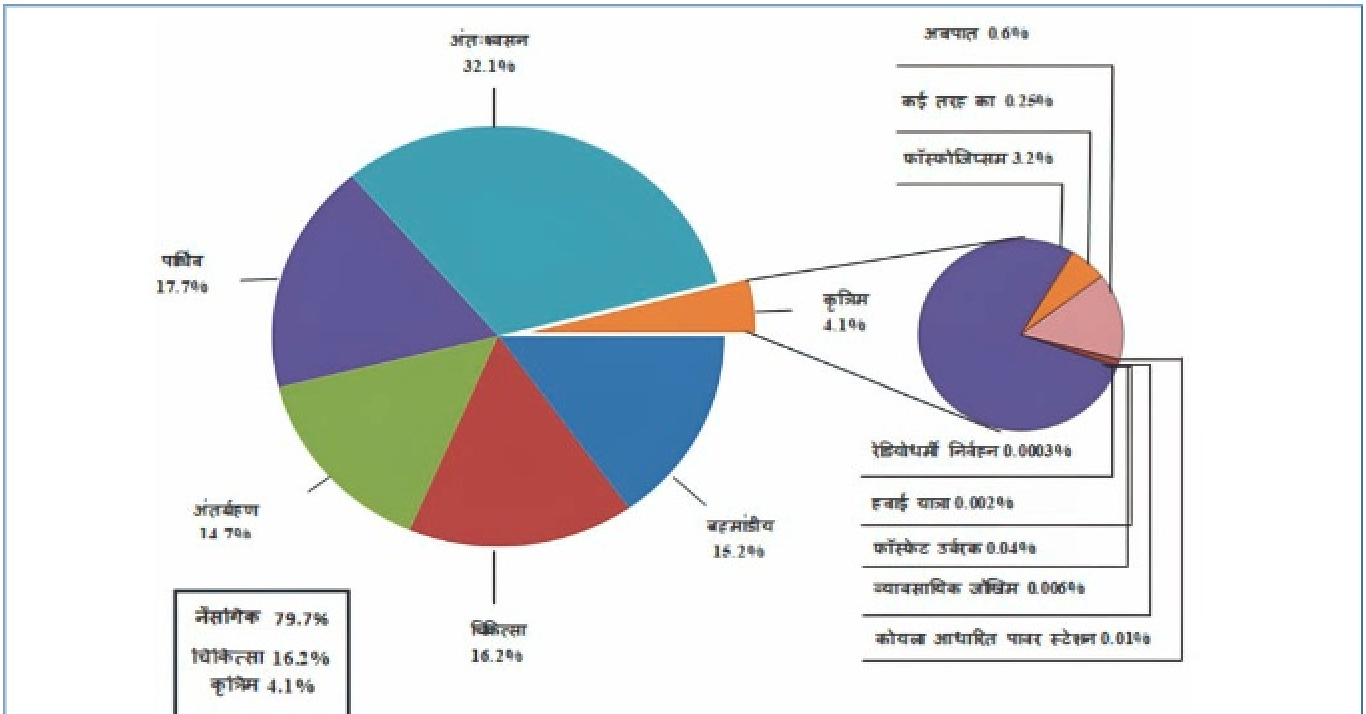

चित्र -5 प्राकृतिक एवं मानव निर्मित स्रोतों द्वारा मिलने वाली मध्यमान डोज़

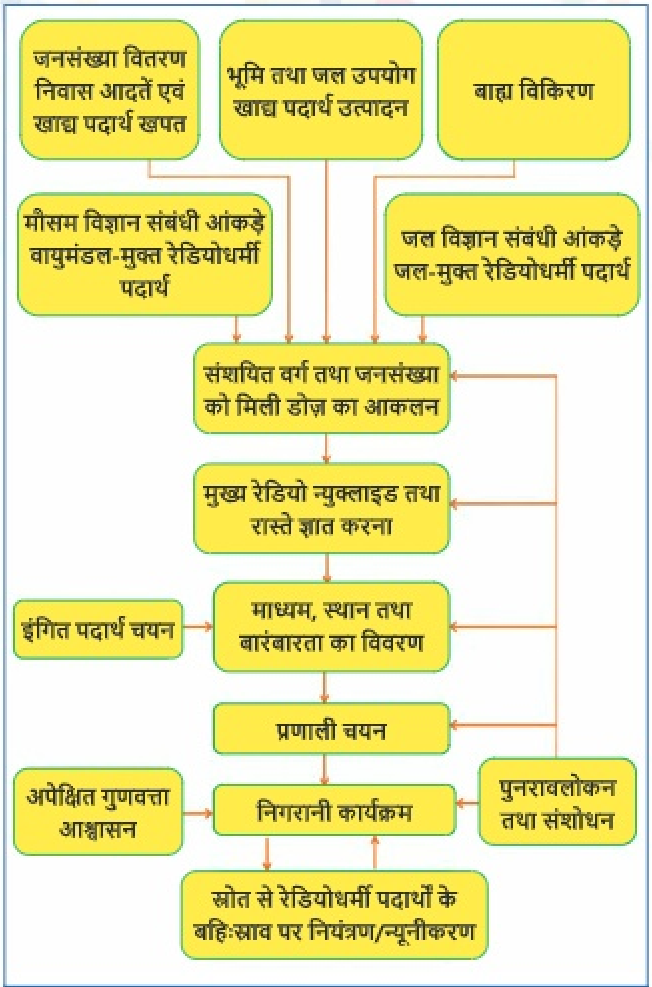

चित्र -6 प्रमुख विकिरण स्रोत के लिए पर्यावरणीय निगरानी का प्रारूप

मानदंड स्थापित किए हैं जिनका अनुसरण आपातकालीन स्थिति में पर्यावरण सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर किया जाता है।

निष्कर्ष

परमाणु ऊर्जा बिजलीघरों/संस्थापनों के सामान्य परिचालन के दौरान जन-साधारण को मिलने वाली विकिरण डोज़, एईआरबी द्वारा निर्धारित सीमा से बहुत कम है। नरौरा एवं काकरापार स्थित परमाणु ऊर्जा बिजलीघरों के अभिकल्पन में सुधार से विकिरण डोज़ और भी कम हुई है। पर्यावरण सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़े यह स्पष्ट दिखाते हैं कि भारतीय परमाणु ऊर्जा बिजलीघरों के परिचालन में रेडियोधर्मी पदार्थों के बहिःस्राव का दुष्प्रभाव नगण्य है।

लेखक का परिचय

श्री योगेन्द्र प्रकाश गौतम

श्री योगेन्द्र प्रकाश गौतम वर्तमान में, वैज्ञानिक अधिकारी-जी, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, नरौरा के पर्यावरण सर्वेक्षण प्रयोगशाला, पर्यावरणीय अनुवीक्षण एवं मूल्यांकन प्रभाग, नरौरा परमाणु बिजलीघर में प्रभारी अधिकारी के पद पर कार्यरत हैं।

"किसी वैज्ञानिक संस्थान को, चाहे वह प्रयोगशाला हो या शिक्षण संस्थान, एक वृक्ष की तरह बहुत देख-भाल के साथ विकसित करना पड़ता है।"

- वर्ष 1963 में, वैज्ञानिक संस्थानों के विकास के संबंध में डॉ. होमी जे. भाभा के उद्गार

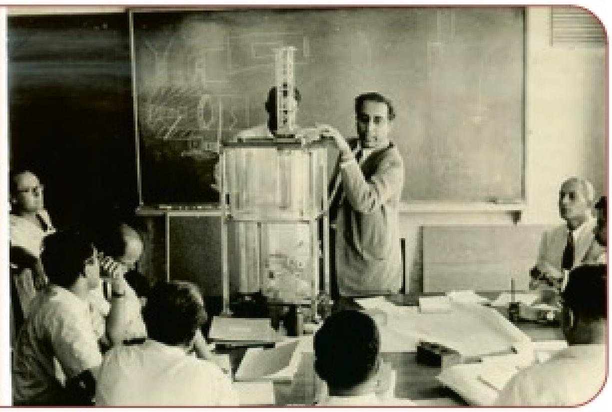

मृदा-खनिज (क्ले-मिनरल्स) एवं परमाणु ऊर्जा

डॉ. मीनू प्राशर
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

परमाणु ऊर्जा, वैश्विक ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक स्वच्छ और विश्वसनीय विकल्प है। हमारा देश भी वर्ष 2070 तक ग्रीनहाउस गैसों के नेट ज़ीरो (शुद्ध-शून्य) उत्सर्जन तक पहुँचने के लिए प्रतिबद्ध है। स्वच्छ बिजली उत्पादन, कम ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन, ईंधन का कुशल उपयोग और कोयले जैसे जीवाश्मीय ईंधनों से होने वाले पर्यावरणीय नुकसान से सुरक्षा, ये सभी लाभ परमाणु ऊर्जा से प्राप्त होते हैं। परमाणु ऊर्जा का उत्पादन परमाणु नाभिकीय विखंडन नामक प्रक्रिया द्वारा होता है, जहाँ यूरेनियम के विशिष्ट समस्थानिक (जैसे कि U-235) के विभाजन के दौरान अत्यधिक ऊर्जा (लगभग 200 मेगा इलेक्ट्रॉन वोल्ट प्रति विखंडन) निकलती है। इस अपार ऊर्जा से बिजली उत्पादन किया जाता है। नाभिकीय ईंधन जैसे कि यूरेनियम-235 के विखंडन से बिजली प्राप्त करने एवं बचे हुए अपशिष्ट को सुरक्षित रूप से प्रबंधित करने के विभिन्न चरणों की श्रृंखला को 'परमाणु ईंधन चक्र' कहा जाता है। इसे निम्न तीन मुख्य भागों में समझा जा सकता है। 'अग्र-भाग' (फ्रंट-एंड) जिसमें नाभिकीय ईंधन तैयार किया जाता है, 'मध्य-भाग' (मिडिल-एंड) जिसमें इस ईंधन का परमाणु रिएक्टर में उपयोग किया जाता है और 'पश्च-भाग' (बैक-एंड) जिसमें नाभिकीय अपशिष्ट का प्रबंधन किया जाता है। 'परमाणु ईंधन चक्र' द्वारा संसाधनों का अधिकतम उपयोग एवं न्यूनतम अपशिष्ट उत्पन्न करके पर्यावरणीय क्षति को सीमित किया है। इस प्रकार, परमाणु ऊर्जा एक सुरक्षित एवं दीर्घकालिक कार्बन-न्यून ऊर्जा विकल्प है। परमाणु ऊर्जा के उत्पादन में मृदा-जन्य (मिट्टी से प्राप्त)

चित्र-1 'परमाणु ईंधन चक्र' के विभिन्न भाग

अनेक प्राकृतिक पदार्थों का उपयोग होता है। परमाणु ईंधन चक्र को चित्र-1 में संक्षेप में दर्शाया गया है।

परमाणु ईंधन चक्र का अग्रभाग (फ्रंट-एंड) - इस प्रारंभिक चरण में रिएक्टर में उपयोग हेतु यूरेनियम-आधारित नाभिकीय ईंधन तैयार किया जाता है। इसके लिए, भूगर्भ में यूरेनियम-अन्वेषण एवं खनन किया जाता है। भारत में, झारखंड के जादूगोड़ा और आंध्र प्रदेश के तुम्मलापल्लि स्थित खदानों में से यूरेनियम अयस्क का खनन किया जाता है। खनित अयस्क, जो अधिकांशतः चट्टान के टुकड़ों के रूप में निकलता है, में बहुत कम मात्रा में यूरेनियम (लगभग 0.2% U_3O_8) होता है जिसका केवल 0.7% ही विखण्डनीय यूरेनियम-235 समस्थानिक होता है। अयस्क को पीसकर रसायनों से उपचारित किया जाता है, जिससे 'येलो केक' (U_3O_8) नामक यूरेनियम उत्पाद चूर्ण (पाउडर) के रूप में तैयार किया जाता है। इस प्रक्रिया को 'दलन' (मिलिंग) कहा जाता है। इस प्रक्रिया के दौरान, प्राप्त ठोस अपशिष्ट, जिसे ' टेलिंग' कहा जाता है, में अब भी कुछ निम्न-स्तरीय रेडियोधर्मी तत्व एवं भारी धातुएँ मौजूद रहती हैं, जिन्हें विशाल 'पड़ोछन कुंड' (टेलिंग पॉन्ड्स) में सुरक्षित रखा जाता है। इसके पश्चात, येलो केक को नाभिकीय ईंधन बनाने के लिए संसाधित किया जाता है। प्राकृतिक यूरेनियम-आधारित ईंधन बनाने के लिए येलो केक को नाभिकीय-स्तर (न्यूक्लियर-ग्रेड) यूरेनियम ऑक्साइड चूर्ण (पाउडर) में परिवर्तित किया जाता है और उसे उच्च ताप चूर्ण धातुकी (पाउडर मेटलर्जी) प्रक्रिया द्वारा निश्चित आकार की यूरेनियम डाईऑक्साइड (UO_2) की सघन गुटिकाओं (पेलेट) में निर्मित किया जाता है। संवर्धित यूरेनियम-आधारित (अर्थात जिसमें U-235 समस्थानिक की मात्रा 0.7% से अधिक होती है) ईंधन बनाने के लिए, सबसे पहले यूरेनियम-आधारित गैसीय यौगिक बनाए जाते हैं जिनका विशेष गैसीय प्रक्रिया द्वारा प्रसंस्करण कर समस्थानिकीय संवर्धन किया जाता है। तत्पश्चात, प्राप्त उत्पाद को पुनः ठोस चूर्ण (पाउडर) में परिवर्तित कर, संवर्धित यूरेनियम डाईऑक्साइड (UO_2) की गुटिकाओं (पेलेट) के रूप ईंधन बनाया जाता है। इन गुटिकाओं को ज़िरकोनियम-आधारित मिश्रधातु की खोखली बेलनाकार नलिकाओं में भरकर ईंधन की छड़ें (फ्यूल रॉड्स) बनाई जाती हैं, जिन्हें विशेष ज्यामिति में समुचित कर ईंधन बंडल (फ्यूल असेंबली) बनाए जाते हैं। परमाणु रिएक्टर में ऊर्जा उत्पादन के लिए इन ईंधन बंडलों का उपयोग किया जाता है।

'परमाणु ईंधन चक्र' का मध्य भाग - इस चरण में, नाभिकीय ईंधन का उपयोग बिजली उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। रिएक्टर प्रचालन के लिए, ईंधन बंडलों को परमाणु रिएक्टर में रखा जाता है, जहाँ न्यूट्रॉन-चालित नाभिकीय विखंडन श्रृंखला अभिक्रिया को नियंत्रित रूप से चलाकर उष्मा के रूप में विखंडन ऊर्जा उत्पन्न की जाती है। उत्पन्न ऊष्मा का उपयोग जल (शीतलक) से उच्च ताप एवं दाब वाली भाप बनाने के लिए किया जाता है। इस प्रकार, प्राप्त भाप से टरबाइन घुमाकर बिजली उत्पन्न की जाती है। ईंधन के प्रकार एवं ऊर्जा क्षमता के आधार पर इसे रिएक्टर में कई महीनों से कई वर्षों तक रखा जा सकता है। रिएक्टर से निकाले जाने के बाद यह 'भुक्तशेष ईंधन' (स्पेंट फ्यूल) कहलाता है जो अत्यधिक गर्म और रेडियोधर्मी होता है। इसे सतत रूप से ठंडा रखने और रेडियोधर्मिता को कम करने के लिए अस्थायी रूप से विशेष जल-भरे कुंडों में लम्बे समय तक भंडारित किया जाता है।

'परमाणु ईंधन चक्र' का पश्च-भाग - यह भाग, भुक्तशेष (व्ययित) ईंधन के अंतिम प्रबंधन और दीर्घकालिक निपटान से संबंधित है। एक तरीका यह है कि इस ईंधन में उपस्थित उपयोगी उत्पादों, जैसे कि यूरेनियम एवं प्लूटोनियम, तथा अन्य समाजोपयोगी रेडियोसमस्थानिकों (सीज़ियम, रुथेनियम, स्ट्रॉन्शियम, इत्यादि) को रसायनिक पुनःप्रसंस्करण द्वारा अलग किया जाता है और परिणामस्वरूप अल्प मात्रा में प्राप्त नाभिकीय अपशिष्ट का सुरक्षित रूप से दीर्घकालिक निपटान किया जाता है। पुनःप्रसंस्कृत यूरेनियम एवं प्लूटोनियम से नया नाभिकीय ईंधन बनाया जाता है। भारत द्वारा यही विकल्प अपनाया

गया है जिसे 'संवृत ईंधन चक्र' (क्लोज़्ड फ्यूल सायकल) कहा जाता है। दूसरा तरीका, जिसमें भुक्तशेष ईंधन (स्पेंट फ्यूल) का पुनर्चक्रण नहीं किया जाता बल्कि उसका सुरक्षित रूप से दीर्घकालिक स्थायी भंडारण किया जाता है, को 'विवृत ईंधन चक्र' (ओपन फ्यूल सायकल) कहा जाता है। कई पश्चिमी देशों जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, स्वीडन, आदि का परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम 'विवृत ईंधन चक्र' पर आधारित है।

'मिट्टी के खनिज' अथवा 'क्ले-मिनरल', जिन्हें 'मृत्तिका खनिज' भी कहा जाता है, अपनी प्रचुरता के कारण स्वच्छ परमाणु ऊर्जा के लिए स्थायी पदार्थ स्रोत हैं। पृथ्वी पर पाए जाने वाले इन सामान्य खनिजों (जैसे कि काओलिनाइट, मोंटमोरिलोनाइट, बेंटोनाइट, इलाइट, इत्यादि) की उपलब्धता भी प्रचुर है। मिट्टी से इनके निष्कर्षण और प्रसंस्करण के लिए, कई अन्य औद्योगिक पदार्थों की तुलना में, कम ऊर्जा और संसाधनों की आवश्यकता होती है। अतः ये पर्यावरणीय-अनुकूल विकल्प भी हैं। चूँकि, ये पृथ्वी के भूविज्ञान के स्वभाविक हिस्से हैं, इसलिए, अभियांत्रिकी समाधानों में इनका उपयोग पर्यावरण के लिए भी लाभदायक है। आइए, अब देखें कि मिट्टी के खनिज (क्ले-मिनरल) कैसे परमाणु ईंधन चक्र के तीनों भागों में महत्वपूर्ण और बहुमुखी भूमिका निभाते हैं।

यूरेनियम खनन और दलन (मिलिंग) में, काओलिनाइट और बेंटोनाइट जैसे खनिजों का उपयोग दूषित जल और मिट्टी को साफ करने एवं उपचारित करने के लिए किया जाता है। मिट्टी स्पंज की तरह काम करते हुए पानी से रेडियोधर्मी एवं अन्य भारी धातुओं को अवशोषित करती (सोख लेती) है, जिससे पानी साफ होता है। धातु-युक्त मिट्टी के स्थायी एवं स्थिर होने से पर्यावरणीय दुष्प्रभाव भी निम्नतम होता है। यूरेनियम मिलिंग से प्राप्त अवशेषों को बड़े कुंडों में संग्रहित किया जाता है, जो अधिकांशतः खनन और मिलिंग स्थलों के निकट स्थित होते हैं। इन अवशेषों में अल्प मात्रा में रेडियोधर्मी पदार्थ और अन्य विषैले तत्व होते हैं। सघन मिट्टी, अवशेषों वाले कुंडों के तल और किनारों पर एक जलरोधी परत बनाती है जो हानिकारक अपशिष्टों को भूजल में रिसने एवं मृदा या भूजल-प्रदूषण से रोकती है। इन कुंडों को बेंटोनाइट-युक्त मिट्टी की परत से ढक दिया जाता है। यह आवरण वर्षा जल द्वारा अपशिष्ट पदार्थों को वातावरण में फैलने से रोकता है और रेडॉन-युक्त रेडियोधर्मी धूल को भी हवा में फैलने से रोकता है। साथ ही, यह आवरण पेड़-पौधों को उगने के लिए स्थिर सतह भी प्रदान करता है। भारत में इस प्रकार के 'पड़ोछन कुंड' (टेलिंग पॉन्ड्स) आंध्र प्रदेश के तुम्मलापल्लि और झारखंड के जादूगोड़ा में हैं।

परमाणु बिजली संयंत्र के प्रचालन के दौरान, वहां के कार्मिकों को विकिरण से सुरक्षित रखना सर्वोच्च प्राथमिकता होती है। मृत्तिका-खनिज (क्ले-मिनरल्स), जिन्हें अक्सर कंक्रीट में मिलाया जाता है, विकिरण परिरक्षण के लिए प्रभावी विकल्प हैं । गामा किरणें एवं न्यूट्रॉन विकिरण जीवन एवं पर्यावरण दोनों के लिए हानिकारक होते हैं। गामा किरणों को अवशोषित करने तथा न्यूट्रॉनों की गति को प्रभावी रूप से कम करने की अपनी निहित क्षमता के कारण, ये खनिज विकिरण अवरोधन हेतु एक महत्वपूर्ण और विश्वसनीय सुरक्षा परत बनाते हैं। मृत्तिका-खनिज आधारित पदार्थों का उपयोग 'शुष्क भंडारण ड्रमों', जो शीतलक कुंड में ठन्डे किए गए भुक्त शेष ईंधन को

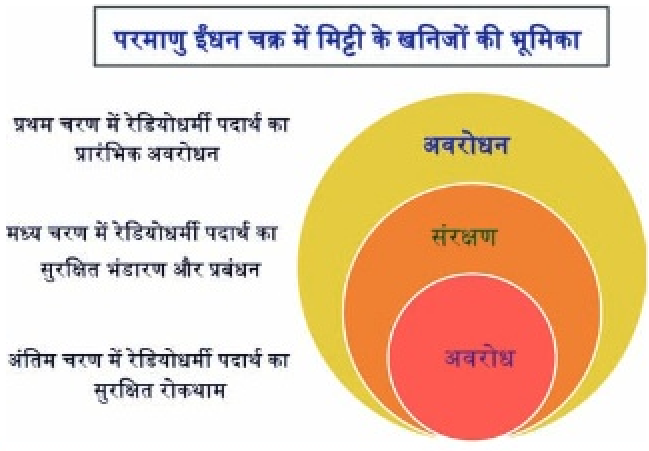

चित्र-2 मृत्तिका - खनिजों की परमाणु ईंधन चक्र के तीनों चरणों में उपयोगिता

सुरक्षित रखने वाले विशेष पात्र (कंटेनर) होते हैं, के अस्तर के रूप में भी किया जाता है। इनकी कम पारगम्यता और उत्कृष्ट अवशोषण क्षमता रेडियोधर्मी कणों को रोककर सुरक्षात्मक सील बनाती है, जिससे आकस्मिक रेडियोधर्मी रिसाव और संभावित संदूषण फैलने का जोखिम काफी घट जाता है। चित्र-2 में मृत्तिका-खनिजों (क्ले-मिनरल्स) के परमाणु ईंधन चक्र के तीनों चरणों में उपयोगिता को दर्शाया गया है।

परमाणु बिजली उत्पादन के बाद अंततः उत्पन्न उच्च-स्तरीय रेडियोधर्मी अपशिष्ट के सुरक्षित निपटान के लिए, गहरे भूवैज्ञानिक भंडार गृह (डीप जियोलॉजिकल रिपॉसिटोरी) एक दीर्घकालिक समाधान के रूप में नियोजित हैं। इन भंडार गृहों की डिज़ाइन में, मृत्तिका-खनिजों (क्ले -मिनरल्स) का उपयोग अभियांत्रिक अवरोध संरचना (इंजीनियर्ड बैरियर सिस्टम) के रूप में सुरक्षा प्रणाली का एक महत्वपूर्ण प्रस्तावित हिस्सा है। 'परमाणु ईंधन चक्र' में इन खनिजों का यह अति-महत्वपूर्ण अनुप्रयोग है। उदाहरणस्वरूप, फिनलैंड के ओन्कालो में स्थित दुनिया का पहला गहरा भूवैज्ञानिक भंडारगृह, अपनी सुरक्षा प्रणाली के एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में बेंटोनाइट मिट्टी के बफर के साथ निर्मित किया गया है। उच्च- स्तरीय रेडियोधर्मी अपशिष्ट पात्र (हाई- लेवल रेडियोएक्टिव वेस्ट कंटेनर) के चारों ओर बफर के रूप में सघन बेंटोनाइट मिट्टी के ब्लॉक का उपयोग किया जाता है। यह मिट्टी का अवरोध हज़ारों वर्षों तक रेडियोधर्मी अपशिष्ट को पर्यावरण से अलग रखने के लिए कार्य करता है। मृत्तिका- खनिज एक जाल के रूप में कार्य करते हुए रेडियोधर्मी कणों को भूजल में घुलने अथवा फैलने से रोकते हैं। जल के संपर्क में आने से बेंटोनाइट मिट्टी असाधारण रूप से प्रसारित (फैलती) है। इसकी यह विशेषता इसे हज़ारों वर्षों में भूवैज्ञानिक परिवर्तनों के कारण बनने वाली किसी भी दरार को अपने आप सील (बंद) करने में सक्षम बनाती है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि रेडियोधर्मी कणों के लिए मिट्टी द्वारा बना अवरोध अखंड एवं स्थायी बना रहे। इस भूवैज्ञानिक भंडार में, मृत्तिका खनिजों का उपयोग, सुरंगों और रिक्त स्थानों को भरने के लिए भी किया गया है, जिससे भूजल में रेडियोधर्मी प्रजातियों के रिसने के प्रति अतिरिक्त अवरोध उत्पन्न होता है।

इस संक्षिप्त लेख से यह स्पष्ट है कि 'परमाणु ईंधन चक्र' स्वच्छ ऊर्जा उत्पन्न करने की एक जटिल लेकिन महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। नाभिकीय ईंधन के खनन स्थलों की सफाई से लेकर रेडियोधर्मी पदार्थों के वातावरण में रिसाव/फैलाव को रोकने के लिए दीर्घकालिक सुरक्षा अवरोधों के निर्माण तक, हर चरण में मृत्तिका खनिजों (क्ले-मिनरल्स) का उपयोग इस प्रक्रिया को सुरक्षित और विश्वसनीय बनाने का महत्वपूर्ण हिस्सा है। मिट्टी की इस प्राकृतिक क्षमता का उपयोग करके, यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि परमाणु ऊर्जा आने वाली पीढ़ियों के लिए स्वच्छ एवं सतत ऊर्जा का एक सुरक्षित और विश्वसनीय विकल्प बनी रहे।

लेखिका का परिचय

डॉ. (श्रीमती) मीनू प्राशर

डॉ. (श्रीमती) मीनू प्राशर वर्तमान में, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई के पदार्थ विज्ञान प्रभाग में वैज्ञानिक अधिकारी-एफ के पद पर कार्यरत हैं।

रेअर अर्थ की रेस - जो जीता वही सिकंदर

नए ज़माने के नए विलायक

डॉ. रितेश रूहेला और निखिलेश नव विज्ञान

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

मानव प्रजाति के विकास का तत्वों के शुद्धिकरण, प्रसंस्करण (प्रोसेसिंग) एवं नए उपयोगों के शोध से गहरा रिश्ता रहा है। इतना गहरा की हम तत्वों के शोध एवं उपयोग के आधार पर मानव सभ्यता के विकास को अनेक युगों, जैसे कि 'तांम्र युग, 'लौह युग' या 'कांस्य युग' में बांटते हैं। समसामयिक परिप्रेक्ष्य में, यदि तत्वों/पदार्थों के आधार पर वर्तमान युग की बात करें तो इसे विरल मृदा तत्वों (रेअर अर्थ एलिमेंट्स; आरईई) का युग, या 'रेअर अर्थ एज' कहना अनुचित नहीं होगा।

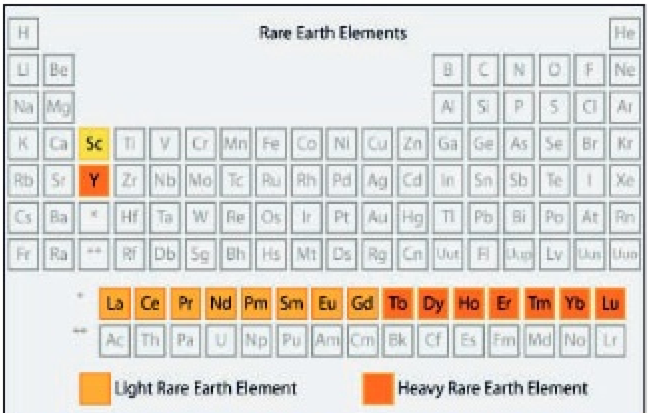

आधुनिक आवर्त सारणी में इंगित विरल मृदा तत्व (रेअर अर्थ एलिमेंट्स)

हमारी दिन-चर्या में, इन तत्वों के उपयोग की सूची बहुत विस्तृत है। स्मार्ट फोन, टेलीविज़न (टीवी), कंप्यूटर, इलेक्ट्रॉनिक्स, स्पीकर्स जैसे घर-घर में उपयोगी वस्तुओं से लेकर विद्युत-संचालित मोटर, पवन ऊर्जा के टर्बाइन, ऑटोमोबाइल, इत्यादि में भी ये तत्व पाए जाते हैं। इनमें से कुछ तत्वों का उपयोग 'उत्प्रेरण' (कैटेलिसिस) अर्थात रसायनिक अभिक्रियाओं की गति-परिवर्तन करने में होता है। कुछ विशेष विरल तत्वों (रेअर एलिमेंट्स) का उपयोग अनेक 'सामरिक अनुप्रयोगों' जैसे कि युद्धक विमानों के घटकों, नाभिकीय ऊर्जा हेतु आवश्यक पदार्थों (जैसे कि यूरेनियम) के संवर्धन, न्यूट्रॉन प्रवाह नियंत्रण, रेडियोभेषजों (रेडियोफार्मास्यूटिकल्स), परमाणु ऊर्जा संयंत्र संरक्षा (रिएक्टर सेफ्टी), इत्यादि में भी बहुतायत से किया जाता है। यह जानना रोचक है कि ये तत्व क्या हैं, इनके गुणधर्म क्या हैं और इन्हें विरल क्यों कहा गया है?

विरल मृदा तत्वों को ऐसा क्यों कहा जाता है?

अगर हम सोने (स्वर्ण) और चाँदी (रजत) की बात करें तो इनका शुद्धिकरण सरल है, क्योंकि ये स्वतः वातावरण में उपलब्ध ऑक्सीजन से अभिक्रिया नहीं करते हैं और इनके यौगिकों का धातु में अपचयन (रिडक्शन) भी आसानी से हो जाता है। लौह-ऑक्साइड (आयरन ऑक्साइड) को भी कोयले के साथ भट्टी में गरम करके अपचयित करने से शुद्ध तरल लोहा (लिक्विड आयरन) प्राप्त होता है। अल्युमिनियम की ऑक्सीजन के साथ अपेक्षाकृत अधिक अभिक्रियाशीलता के कारण इसका शुद्धिकरण कठिन है। अल्युमिनियम की प्राप्ति हेतु विद्युत-अपघटन (इलेक्ट्रोलाइसिस) आवश्यक है।

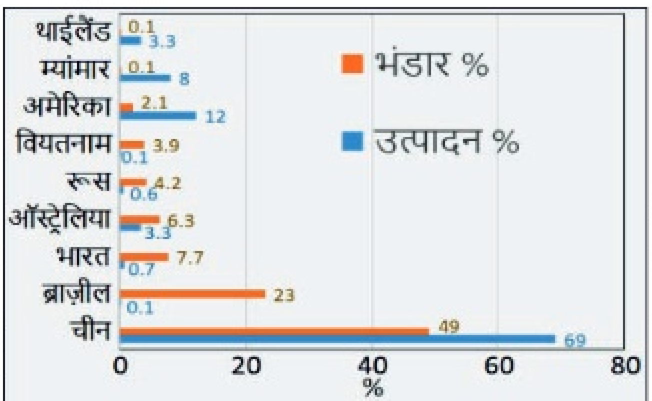

रेअर अर्थ के भंडार एवं उत्पादन (वैश्विक परिदृश्य)

ठीक इसी तरह, यदि अल्युमिनियम जैसी अभिक्रियाशीलता वाले 8 से 10 भिन्न तत्व गुणधर्मों में समान मिश्रधातु/ अयस्क के रूप में उपलब्ध हों तो उनका शुद्धिकरण अत्यधिक कठिन होगा। सबसे पहली चुनौती तो यह होगी कि इन तत्वों को शुद्ध रूप में अलग-अलग (रेअर अर्थ सेपरेशन एंड प्यूरिफिकेशन) कैसे किया जाए। दूसरी चुनौती और भी बड़ी होगी जिसमें इन तत्वों के ऑक्साइडों को धातु में परिवर्तित (रेअर अर्थ ऑक्साइड टू मेटल कन्वर्ज़न) किया जा सके। इस प्रक्रिया, में धातु-शुद्धिकरण विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है। इन तत्वों के स्रोतों की विरलता एवं जटिलता, पृथक्करण की चुनौतियों, धातुकर्म एवं शुद्धिकरण से सम्बंधित कठिनाइयों, इत्यादि के कारण ही इन तत्वों को विरल मृदा तत्व कहा जाता है।

जलधातुकर्मीय (हाइड्रोमेटलर्जिकल) विधि द्वारा रेअर अर्थ का निष्कर्षण

अधिकांश धातु जैसे कि आभूषणों में प्रयुक्त चमकीले धातु (स्वर्ण, रजत, तांबा, इत्यादि) सामान्यतया पृथ्वी के गर्भ से अयस्कों के रूप में ही प्राप्त होते हैं। अयस्क से धातु / मिश्रधातु के रूपांतरण में खनिकों, वैज्ञानिकों और इंजीनियरों की विशेष भूमिका होती है। पृथ्वी में ये तत्व विशुद्ध रूप में नहीं, बल्कि यौगिकों, जैसे कि ऑक्साइड, फॉस्फेट, कार्बोनेट, इत्यादि के रूप में पाए जाते हैं। जिन

मोनाज़ाइट अयस्क

पदार्थों / स्रोतों से धातुओं का पृथक्करण एवं शुद्धिकरण आर्थिक रूप से अनुकूल तरीकों से किया जा सकता है, उन्हें अयस्क कहते हैं। उदहारण के लिए, मोनाज़ाइट एक अयस्क है जो मुख्य रूप से रेअर अर्थ तत्वों एवं थोरियम (Th) की उपस्थिति के लिए जाना जाता है। यह सामान्यतः लाल-भूरे रंग का एक फॉस्फेट खनिज है और सीरियम (Ce), लैंथेनम (La), प्रेसियोडिमियम (Pr) और नियोडिमियम (Nd) तत्वों का एक महत्वपूर्ण स्रोत है।

मोनाज़ाइट समुद्र तटीय और अंतर-देशीय प्लेसर स्रोतों में पाया जाता है। भारत में, इसके निक्षेप (डिपॉज़िट) मुख्यतः केरल, तमिल नाडु एवं ओडिशा में हैं। थोरियम (Th) और यूरेनियम (U) जैसे रेडियोधर्मी तत्वों की उपस्थिति के कारण भारत में मोनाज़ाइट का खनन एवं इनमें से यूरेनियम, थोरियम और रेअर अर्थ तत्वों का निष्कर्षण परमाणु उर्जा विभाग के अंतर्गत सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम 'आईआरईएल (इंडिया) लिमिटेड' द्वारा ही किया जाता है। सर्वप्रथम, समुद्र तटीय इलाकों में पाई जाने वाली मोनाज़ाइट युक्त बालू में से अन्य महत्वपूर्ण खनिज जैसे इल्मेनाइट (टाइटेनियम युक्त), बालू-क्षेपण एवं गर्शन में अत्यधिक उपयोग होने वाले गार्नेट (गार्नेट फॉर सैंड ब्लास्टिंग एंड एब्रेशन), इत्यादि को निक्षालित करने के बाद फॉस्फेट रूपी मोनाज़ाइट को कॉस्टिक सोड़ा की मदद से हाइड्रॉक्साइड में परिवर्तित किया जाता है। इस प्रक्रिया के बाद भी इसमें यूरेनियम और थोरियम मौजूद होते हैं।

अब इनमें से, रेअर अर्थ तत्वों को निकालने के लिए हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से अभिक्रिया कराई जाती है जिससे रेअर अर्थ क्लोराइड के रूप में जलीय माध्यम में विलयन अवस्था में प्राप्त होते हैं जबकि यूरेनियम और थोरियम अविलयित ठोस अवस्था में बने रहते हैं। इसके आगे, सबसे बड़ी चुनौती यह है कि अनेकों रेअर अर्थ क्लोराइड युक्त जलीय विलयन (जिनके गुण-धर्म एक जैसे हैं) से अलग-अलग रेअर अर्थ तत्वों को कैसे पृथक किया जाए? विलायक निष्कर्षण (सॉल्वेंट एक्सट्रेक्शन) पद्धति द्वारा रेअर अर्थ

क्लोराइड का पृथक्करण एवं शुद्धिकरण किया जाता है।

विलायक निष्कर्षण - एक चुनौतीपूर्ण प्रक्रिया

पानी और तेल, जो सामान्यतया आपस में समांगीय विलयन नहीं बनाते हैं। यदि इन दोनों को मिलकर मिक्सर में मिश्रित किया जाए तो तेल की छोटी-छोटी बूँदें पानी में तैरती दिखाई देंगी और मिक्सर को रोके जाने पर तेल और पानी पुनः पृथक (अलग) हो जाएंगे। सामान्यतया तेल अपने कम घनत्व के कारण पानी के ऊपर एक पृथक परत के रूप में रहेगा। इसी प्रक्रिया में, यदि कोई विशेष कार्बनिक विलायक (ऑर्गेनिक सॉल्वेंट) को तेल के साथ मिलाया जाए, जो पानी में विलयित धातु आयनों (मेटल आयन्स) को घेर ले तो वह विलायक इन धातुओं को जलीय माध्यम से तैलीय माध्यम में स्थानांतरित कर देगा। मिक्सर द्वारा मिश्रण (जलीय विलयन - तेल - कार्बनिक विलायक) को मिलाने से पानी और तेल के बीच की सतह का क्षेत्रफल बढ़ जाने से धातु आयनों का स्थानांतरण भी बढ़ जाता है। इस प्रकार, प्राप्त भिन्न तत्वों से युक्त कार्बनिक विलायक को जब पुनः सांद्र अम्लीय विलयन के संपर्क में लाकर मिश्रित किया जाए तो धातु आयनों के पुनः जलीय प्रावस्था में आने से हमें शुद्ध धातुओं की जलीय धारा प्राप्त हो जाती है। प्राप्त जलीय विलयन की उपयुक्त क्षार (एल्कली) जैसे सोडियम कार्बोनेट या कॉस्टिक सोड़ा से अभिक्रिया द्वारा धातु लवणों को अवक्षेपित (प्रेसीपिटेट) किया जा सकता है।

यद्यपि यह प्रक्रिया वर्णन में सरल लगती है, किंतु इनका वास्तविक कार्यान्वयन कठिन और चुनौतिपूर्ण होता है। प्रस्तुत चित्र में विलायक निष्कर्षण प्रक्रिया को सांकेतिक रूप में दिखाया गया है।

नए विलायकों पर शोध

एक महत्त्वपूर्ण चुनौती यह है की विलायक की धातु विशेष के साथ चयनात्मकता (सेलेक्टीविटी) होनी चाहिए, ताकि धातु विशेष को जटिल विलयनों / मिश्रणों से पृथक किया जा सके। वैश्विक स्तर पर अधिकांशतः कार्बफ़ॉस्फ़ोरस विलायकों (ऑर्गेनोफॉस्फोरस सॉल्वेंट्स) का उपयोग किया जाता है। इन विलायकों की चयनात्मकता कम होने के कारण, सौ (100) से भी अधिक बार जलीय-तैलीय प्रावस्था को संपर्क किए जाने की आवश्यकता (कान्टेक्ट स्टेजेस) पड़ती है, जिससे प्रक्रिया की लागत बढ़ जाती है। फॉस्फोरस युक्त विलायकों की एक और समस्या यह भी है कि उपयोग के बाद इसका निपटान कठिन एवं चुनौतीपूर्ण

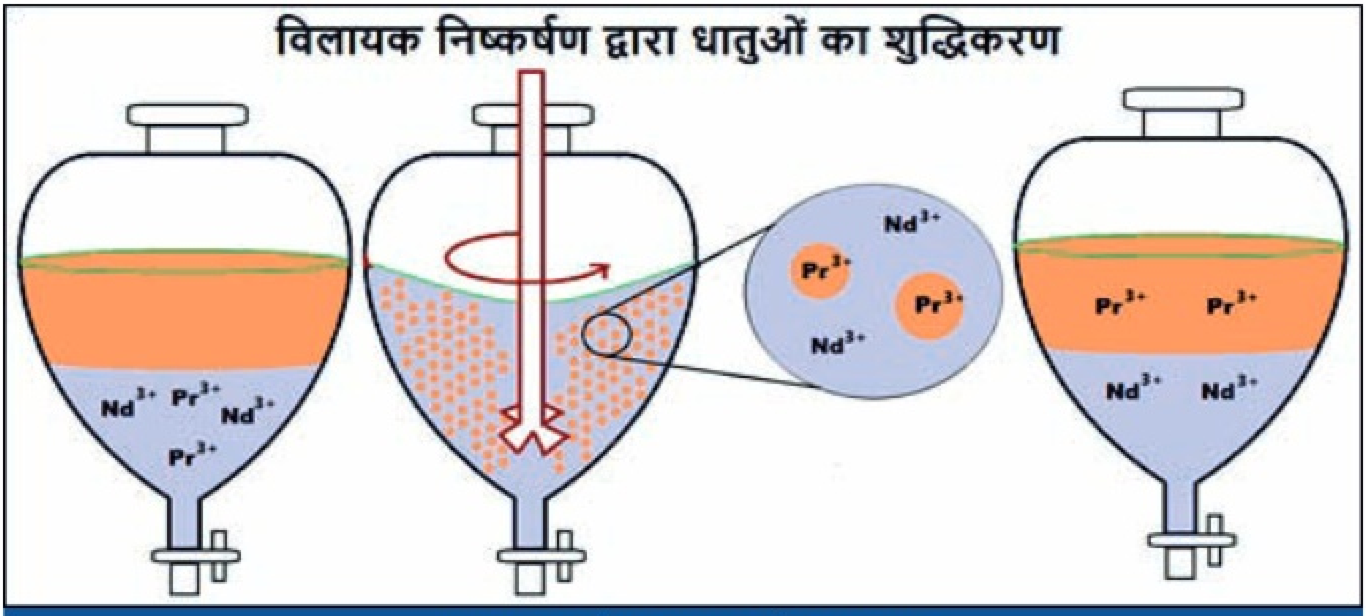

विलायक निष्कर्षण प्रक्रिया का सांकेतिक प्रारूपण

बारह (12)-चरणीय मिक्सर सेटलर संयंत्र

होता है। पर्यावरणीय प्रदूषण को नियंत्रण में रखने के लिए इनका संग्रह भी करना पड़ता है। नए विलायकों का विकास उक्त समस्या का एक प्रभावी समाधान है। संलग्न चित्र में एक बहु-चरणीय मिक्सर सेटलर संयंत्र दिखाया गया है।

नए विलायकों के विकास के लिए सहसंयोजन रसायनिकी (कोऑर्डिनेशन केमिस्ट्री), कार्बनिक संश्लेषण एवं क्वांटम रसायनिकी विषयों एवं तत्संबंधी अनुप्रयोगों में दक्षता आवश्यक है। चयनात्मक विलायक रेअर अर्थ तत्वों को चिह्नित कर पृथक कर सकते हैं। उदहारण के लिए, यदि किसी विलायक की चयनात्मकता 1.3 से बढ़ाकर 4 हो जाए तो संपर्क प्रावस्थाओं (कांटेक्ट स्टेजेस) की संख्या सीधे 100 से घटकर 20 तक हो सकती है। केवल इतना ही नहीं, इससे निकटवर्ती रेअर अर्थ तत्वों, जैसे नियोडायमियम (Nd)- प्रेसियोडायमियम (Pr), को पृथक करना भी सरल हो जाता है। भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में नए विलायकों के विकास हेतु शोध कार्य किया जा रहा है। कुछ विलायकों के विषय में प्रयोगशाला-स्तर पर अब तक प्राप्त परिणाम आशाजनक हैं। नए चयनात्मक विलायकों के संश्लेषण एवं संबंधित अन्वेषण सहित अन्य सभी प्रकार के प्रयास इस दिशा में किए जा रहे हैं। तथापि, उत्कृष्ट चयनित विलायकों को बृहत स्तर पर तैयार कर पाना और उन्हें उपयोग में ले आना भी एक चुनौती है। इन नए विलायकों की एक विशेषता यह है कि ये केवल कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन और नाइट्रोजन युक्त हैं और फॉस्फोरस के अभाव के कारण सामान्य दहन (कम्बशन) द्वारा भी, पर्यावरणीय अनुकूल रूप से इनका निपटान किया जा सकता है। संलग्न चित्र में इन विलायकों के शोध एवं विकास कार्य हेतु प्रयोगशाला स्तर की गतिविधियों को प्रतीक के रूप में दिखाया गया है।

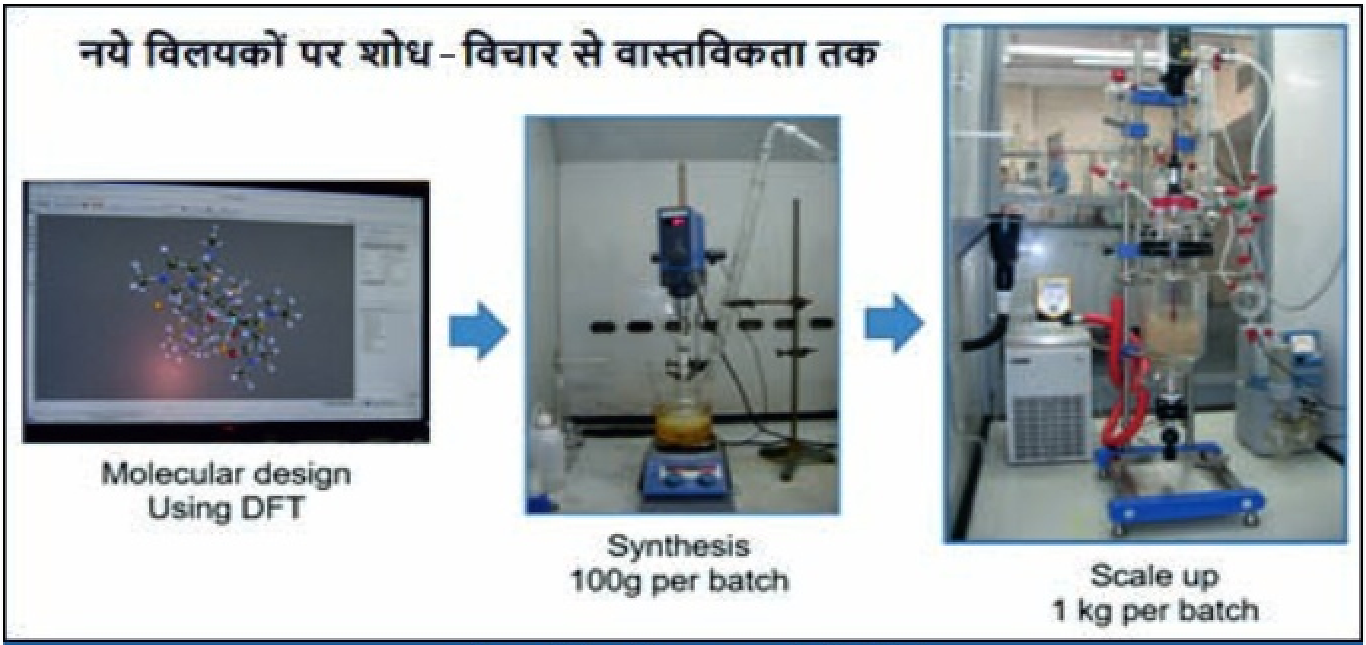

नए विलायकों हेतु प्रयोगशाला स्तर की गतिविधियां

विरल धातु और टाइटेनियम थीम पार्क

इंडियन रेअर अर्थ लिमिटेड (आईआरईएल) ने भोपाल, मध्य प्रदेश में 'रेअर अर्थ मेटल और टाइटेनियम थीम पार्क' का भविष्योन्मुखी संकल्पना शुरू की है। इस थीम पार्क में भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई द्वारा विकसित प्रयोगशाला-स्तर की तकनीकों पर आधारित एक प्रायोगिक संयंत्र (पायलट प्लांट) भी शामिल है। इन तकनीकों के प्रदर्शन का प्रमुख उद्देश्य उभरते उद्यमियों और स्टार्टअप्स में विश्वास जगाना है। इससे, देश में रेअर अर्थ के उत्पादन और खपत को प्रोत्साहन मिलेगा और रेअर अर्थ के क्षेत्र में वाणिज्यिक संयंत्र (कमर्शियल प्लांट) स्थापित करने में सहायता मिलेगी। इस थीम पार्क में लैंथेनम, सीरियम और नियोडिमियम धातुओं के उत्पादन को प्रदर्शित करने के लिए लघु-संयंत्र (मिनी-प्लांट), उपयोग में लाए जा चुके चुंबक, एलईडी एवं लैंप फॉस्फोर से रेअर अर्थ प्रतिप्राप्ति की सुविधा और टाइटेनियम श्रृंखला से जुड़ी सुविधाएँ उपलब्ध हैं। जैसा कि हम जानते हैं कि चीन और अन्य देशों में प्राकृतिक रूप से उपलब्ध विरल तत्वों की प्रचुरता है। रेअर अर्थ की रेस में बने रहने के लिए हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम वैज्ञानिक रूप से चयनात्मक विलायकों के शोध को प्रोत्साहित करें ताकि इस क्षेत्र में आत्म-निर्भरता प्राप्त की जा सके।

आभार

लेखकगण, इस लेख की संरचना में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सहयोग एवं मार्गदर्शन देने वाले सभी व्यक्तियों विशेषकर डॉ. आलोक अवस्थी, सह निदेशक, पदार्थ वर्ग से प्राप्त सतत समर्थन के लिए कृतज्ञतापूर्वक आभार व्यक्त करते हैं।

लेखकगण का परिचय

डॉ. रितेश रूहेला

श्री निखिलेश नव विज्ञान

डॉ. रितेश रूहेला, वैज्ञानिक अधिकारी -जी और श्री निखिलेश नव विज्ञान, वैज्ञानिक अधिकारी-एफ वर्तमान में, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई स्थित पदार्थ प्रसंस्करण प्रभाग में कार्यरत हैं।

विकिरण मॉनिटरन घड़ी

विकिरण स्तर की सतत जानकारी देने में समर्थ

शिवम अग्रवाल और शुचिता बहादुर

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

किसी भी अज्ञात एवं आपात स्थिति में, प्रथम बचावकर्ताओं के लिए घटनास्थल पर विकिरण-परिदृश्य को सही तरीके से समझना अत्यावश्यक है। इसी को ध्यान में रखकर, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के विकिरण सुरक्षा प्रणाली प्रभाग (RSSD) द्वारा विकिरण मॉनिटरिंग घड़ी (रेडिएशन मॉनिटरिंग वॉच; RMW; चित्र-1) विकसित की गई है। अल्प भार वाली, संहत (कॉम्पैक्ट) बैटरी से चलने वाली इस घड़ी को साधारण घड़ी की तरह ही कलाई पर पहना जा सकता है। अपने आस-पास के परिवेश में गामा विकिरण के स्तर को यह घड़ी लगातार मापती रहती है। इसका उपयोग प्रथम बचावकर्ताओं और आपातकालीन परिस्थितियों में कार्यरत कार्मिकों द्वारा किया जा सकता है।

दिखने में सामान्य घड़ियों जैसी लेकिन कार्य से भिन्न, इस विकिरण घड़ी का विकास चुनौतीपूर्ण रहा है। कम ऊर्जा क्षमता की बैटरी (कॉइन सेल) से विकिरण घड़ी को लम्बे समय तक चलाने के लिए, घड़ी के अधिकाँश घटकों में प्रयुक्त ऊर्जा खपत को कम किया गया है। साथ ही, छोटी सी घड़ी के लिए विकिरण संसूचक भी छोटा ही होना चाहिए। अतः छोटे आकार के संसूचक को (जो सामान्यतया कम संवेदनशील होता है) कम विकिरण स्तर मापने में सक्षम बनाया जाना भी ज़रूरी है। इन आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए, इस विकिरण घड़ी (RMW) हेतु 3 वोल्ट का लीथियम बैटरी कॉइन सेल चुना गया जो कॉम्पैक्ट भी है और आसानी से उपलब्ध भी। विकिरण संसूचक के रूप में इसमें एक छोटी बेलनाकार गीगर-मुलर नलिका (GM-ट्यूब; लंबाई 37 मिलीमीटर, व्यास 9 मिलीमीटर) का उपयोग किया गया। यह ट्यूब गैस से भरी एक विकिरण संसूचक बंद नलिका होती है, जिसका उपयोग आयनकारी विकिरण मापन हेतु किया जाता है। विकिरण मॉनिटरिंग घड़ी में संसूचक के रूप में GM-ट्यूब का उपयोग चुनौतीपूर्ण है, क्योंकि जहां इसके प्रचालन हेतु लगभग 550 वोल्ट विद्युत ऊर्जा आवश्यक है, वहीं प्रयुक्त कॉइन सेल केवल 3 वोल्ट ही दे सकता है। चूँकि, सामान्यतया उपलब्ध उच्चविभव जनित्र या तो आकार में बड़े होते हैं या फिर अधिक बिजली की खपत करते हैं, इसलिए, 3 वोल्ट को 550 वोल्ट में बदलने के लिए एक विशेष उच्च विभव जनित्र को छोटे आकार में बनाया गया। बिजली की अल्प खपत के साथ इस जनित्र का प्रचालन संभव बनाया गया ताकि विकिरण के अभाव में घड़ी में विद्युत की खपत अल्पतम हो और एक ही बैटरी से अधिक आयु मिल सके। तालिका-1 में इस विकिरण घड़ी के प्रमुख तकनीकी विवरण (विनिर्देश) दिए गए हैं।

चित्र-1 कलाई में पहने हुए विकिरण मॉनिटरिंग घड़ी

तालिका-1 विकिरण मॉनिटरिंग घड़ी (RMW) – विनिर्देश	
डायल व्यास	~52 मिलीमीटर
वज़न	~65 ग्राम (बैटरी सहित)
गामा डोज़ दर सीमा	0.04 μSv/h से 4 mSv/h
अलार्म	श्रव्य अलार्म (डोज़ दर सीमा पार होने पर)
विद्युत् धारा (करंट)	~70 μA
बैटरी	CR2450 लिथियम कॉइन सेल
बैटरी की आयु	1 वर्ष से अधिक

विकिरण मॉनिटरिंग घड़ी की मुख्य विशेषताएँ

- परिवेशीय गामा विकिरण डोज़ और डोज़ दर का सतत मापन
- गामा विकिरण संसूचन (डिटेक्शन) के लिए गीगर-मुलर ट्यूब का उपयोग
- कॉम्पैक्ट, वज़न में हल्की और लंबे समय तक पहनने में आसान
- जल-प्रतिरोधी डिज़ाइन
- कैलेंडर के साथ डिजिटल घड़ी
- पूर्व निर्धारित डोज़ दर पर श्रव्य अलार्म
- लो बैटरी और अधिक परास सूचक का प्रावधान

सारांशतः यह विकिरण मॉनिटरिंग घड़ी आसानी से पहनने योग्य विकिरण संसूचन यंत्र है, जिसे विशेष रूप से प्रथम बचावकर्ता, आपातकालीन परिस्थितियों में कार्यरत कार्मिकों और विकिरण संभावित क्षेत्रों में कार्यरत व्यक्तियों के लिए विकसित किया गया है। यह यंत्र विकिरण स्तर की निरंतर जानकारी प्रदान करता है।

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र द्वारा निर्मित विकिरण मॉनिटरिंग घड़ी की औपचारिक जानकारी निम्न लिंक पर सार्वजनिक रूप से उपलब्ध है।

https://www.barc.gov.in/technologies/rmw/index.html

लेखकगण का परिचय

श्री शिवम अग्रवाल

सुश्री शुचिता बहादुर

श्री शिवम अग्रवाल, वैज्ञानिक अधिकारी-ई और सुश्री शुचिता बहादुर, वैज्ञानिक अधिकारी- एफ वर्तमान में, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई के विकिरण संरक्षा प्रणाली प्रभाग में कार्यरत हैं।

भा.प.अ. केंद्र परिसर में रंग-बिरंगी तितलियाँ

डॉ. देवेश नारायण और हिमांशु मिश्रा

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

तितलियाँ प्रकृति का अनुपम एवं मनमोहक उपहार हैं, जो अपने रंग-बिरंगे पंखों, मनोहारी रूप तथा गतिविधियों से हमेशा हमें आकृष्ट करती हैं और हर किसी का मन मोह लेती हैं। किंतु क्या हम जानते हैं कि इनका अस्तित्व हमारे लिए कितना महत्वपूर्ण है? तितलियाँ वे जीव हैं जो पेड़-पौधों का परागण कर उनके फलधारण को संभव बनाती हैं। पेड़-पौधे परागण के लिए कीटों पर बहुत अधिक निर्भर होते हैं। मधुमक्खियों के बाद सर्वाधिक परागण तितलियों के माध्यम से ही होता है।

इन्हीं तितलियों के संवर्धन और संरक्षण हेतु भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में 'तितली उद्यान' विकसित किया गया है। केंद्र के दक्षिणी छोर (साउथ साइट) स्थित 'भाभा वनस्पति उद्यान' के एक हिस्से को तितली उद्यान के तौर पर संवर्धित किया गया है। 40 से भी अधिक प्रजातियों की तितलियों का यह निवास स्थान वर्षाऋतु के आगमन के पश्चात मनमोहक तितलियों से भर जाता है। यूँ तो तितलियाँ वर्षभर अपने रंगों एवं गतिविधियों से सभी का ध्यान आकर्षित करती हैं, किन्तु मानसून के आगमन के पश्चात इनकी संख्या एवं विविधता पूरे उद्यान को आच्छादित कर देती है। विविधताओं एवं संख्या की दृष्टि से तितलियों का स्वर्णिम एवं सर्वाधिक रोचक काल जुलाई से नवंबर तक रहता है। 'भाभा वनस्पति उद्यान' में पाई जाने वाली तितलियाँ मुख्यतः निम्न चार प्रजातियों से संबंध रखती हैं।

निंफैलिडे - तितलियों की सबसे बड़ी इस प्रजाति में मिल्कवीड तितलियाँ मुख्य हैं। ये मिल्कवीड (आक), लैंटाना (राईमुनिया, धनेरी, पंचफूली), क्रोटेलारिया (झुनझुनिया/सण), हेलियोट्रोपियम (हाथीसूंढ़), आदि पौधों के फूलों पर रस (नेक्टर) की खोज में आकर्षित होती हैं। इन्हें इनके अनोखे पैरों के लिए ब्रशनुमा पैरों वाली तितलियाँ (ब्रश-फुटेड बटरफ्लाइ) भी कहा जाता है। इस प्रजाति की तितलियों में कॉमनक्रो, प्लेनटाइगर, स्ट्राइप्डटाइगर, लेमनपैंसी, एगबटरफ्लाई, पीकॉकपैंसी, चॉकलेटपैंसी, ब्लूटाइगर, ग्लासीटाइगर, कॉमनकैस्टर, आदि शामिल हैं (चित्र-1)।

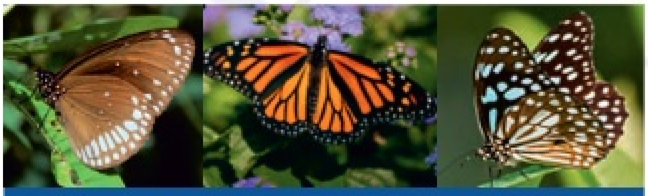

चित्र-1 कॉमनक्रो, स्ट्राइप्डटाइगर, ब्लूटाइगर तितलियाँ

पैपिलियोनिडी - आकार में बड़ी और खूबसूरत रंगों वाली प्रजाति को अनूठे पंखों के कारण स्वॉलोटेल बटरफ्लाई के नाम से जाना जाता है। नींबू परिवार के पौधे जैसे कॉमनलाइम, बेल, करीपत्ता, आदि इनके प्रमुख होस्टप्लांट हैं। महाराष्ट्र की राज्य-तितली ब्लूमॉर्मन इसी प्रजाति की है।

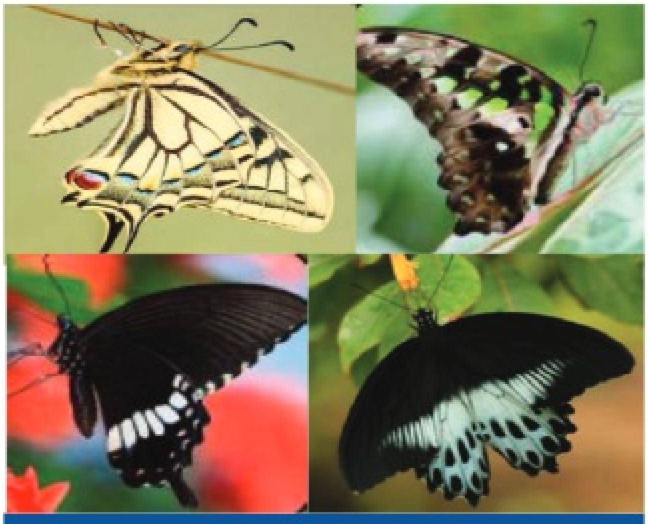

चित्र-2 लेमन बटरफ्लाई, टेल्डजे, कॉमनजे, ब्लूमॉर्मन तितलियाँ

अन्य प्रमुख सदस्यों में टेल्डजे, कॉमनजे, कॉमन मॉर्मन, लेमन बटरफ्लाई, क्रिमसनरोज़, आदि शामिल हैं (चित्र-2)।

पिएरिडी - ये तितलियाँ अपने चमकीले पीले एवं सफेद रंगों से पूरे उद्यान को आच्छादित कर देती हैं। इस प्रजाति के सदस्य मुख्यतः हैमेलिया, स्टैचिटार्फेटा, जाट्रोफा एवं लैंटेना के फूलों की ओर आकर्षित होते हैं। ग्रेट ऑरेंज टिप, कॉमन जेज़ेबेल, येलो ऑरेंज टिप, व्हाइट ऑरेंज टिप, कॉमन वांडरर, कॉमन ग्रास येलो, आदि इस प्रजाति की प्रमुख तितलियाँ हैं (चित्र-3)।

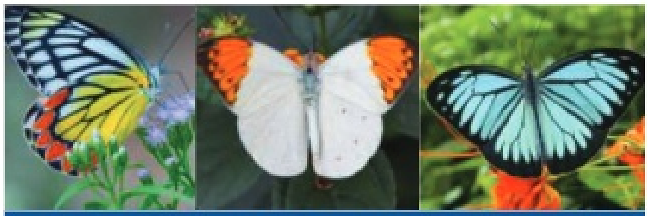

चित्र-3 कॉमन जेज़ेबेल ग्रेट ऑरेंजटिप कॉमन वांडरर तितलियाँ

लाइकेनिडी - इस प्रजाति की तितलियाँ छोटे आकार की, मुख्यतः नीले एवं स्लेटी (ग्रे) रंग की होती हैं। छोटे फूलों वाले एवं घासवर्ग के पौधे इनके प्रमुख होस्ट प्लांट हैं। मुख्यतः वेडेलिया, ट्राइडैक्स (एकदंडी), अल्टरनेंथेरा, गुलाब एवं अकरकरा इन तितलियों को आकर्षित करते हैं। इस प्रजाति की प्रमुख तितलियाँ कॉमन पियरोट, रेडपियरोट, कॉमन सेरूलियन एवं लेसर ग्रास ब्लू, आदि हैं (चित्र-4)।

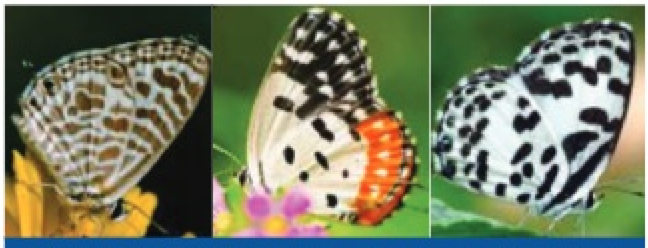

चित्र-4 कॉमन सेरूलियन, रेडपियरोट, कॉमन पियरोट तितलियाँ

जीवन-यापन के लिए तितलियाँ विशेष प्रकार के पौधों की ओर आकर्षित होती हैं। मादा तितलियाँ अपने होस्ट प्लांट को अपने पैरों में लगे संवेदकों (सेंसर) की मदद से पहचान लेती हैं तथा केवल उन्हीं पौधों की पत्तियों पर अंडे देती हैं। होस्ट प्लांट को दो समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

लार्वल होस्ट प्लांट - इन पौधों की पत्तियों पर तितलियाँ अपने अंडों को स्थापित करती हैं। अंडों से निकले कैटरपिलर (लार्वा) इन्हीं पौधों की पत्तियों को खाकर अपना संवर्धन करते हैं। कैटरपिलर तितली की वह अवस्था है जिसमें उन्हें अत्यधिक भोजन की आवश्यकता होती है और वे ठोस भोजन ग्रहण करते हैं। छुईमुई, पैशन फ्लावर, बतखबेल, मिल्कवीड, आदि प्रमुख लार्वल होस्ट प्लांट हैं। इन पौधों के ऊपर या आसपास कैटरपिलर जीवन की अगली अवस्था अर्थात प्यूपा अवस्था में चले जाते हैं (चित्र-5)।

चित्र-5 कॉमन लाइम, करीपत्ता (लार्वल होस्ट प्लांट)

नेक्टर प्लांट - इन पौधों के फूलों पर तितलियों की वयस्क अवस्था व्यतीत होती है। इस अवस्था में तितलियों का मुख्य भोजन फूलों का नेक्टर होता है। तितलियाँ इस अवस्था में अपना भोजन द्रवरूप में ही ग्रहण कर सकती हैं, क्योंकि इनके मुखांग द्रव को ग्रहण करने के लिए ही विकसित होते हैं। क्रोटेलारिया, हेलियोट्रोपियम, मिल्कवीड, आदि प्रमुख नेक्टर प्लांट हैं (चित्र-6)।

चित्र-6 हेलियोट्रोपियम, क्रोटेलारिया (नेक्टर प्लांट)

तितलियों की प्रमुख गतिविधियाँ

कोर्टशिप - वयस्क अवस्था में तितलियाँ अपने साथी को आकर्षित करने के लिए रंगीन पंखों तथा फेरोमोन प्रकार के

रसायनों का उपयोग करती हैं। मिल्कवीड समूह की तितलियाँ क्रोटालेरिया एवं हेलियोट्रोपियम जैसे पौधों के फूलों और पत्तियों से पाइरोलिजिडीन नामक एल्कलॉइड रसायन ग्रहण करती हैं। यह रसायन नर तितलियों में फेरोमोन निर्माण के लिए आवश्यक होता है, जिसके माध्यम से वे मादा तितलियों को अपनी ओर आकर्षित करती हैं (चित्र-7)।

चित्र-7 कॉमन मॉर्मन

मडपडलिंग - सामान्यतः नवजात नर तितलियाँ गीली मिट्टी, नमीयुक्त रेत अथवा जलस्रोतों के किनारों पर सैकड़ों की संख्या में एकत्रित होती हैं। इस प्रक्रिया को मडपडलिंग (चित्र-8) कहा जाता है। इस दौरान, वे पानी के साथ अपने शरीर के लिए आवश्यक खनिज लवणों का अवशोषण करती हैं। तितलियाँ खनिज लवणों की पूर्ति हेतु सड़े-गले फलों, पक्षियों की विष्ठा, मृत केकड़ों तथा अन्य मृतजीवों से निकलने वाले पोषक तत्वों का भी उपयोग करती हैं।

चित्र-8 मडपडलिंग

ये खनिज लवण मिलन के दौरान मादा साथी को स्थानांतरित कर दिए जाते हैं, जो स्वस्थ अंडों के निर्माण हेतु आवश्यक होते हैं।

मिमिक्री - तितलियाँ विशेषतः कैटरपिलर तथा वयस्क अवस्था में अपने परभक्षियों से बचाव हेतु स्वयं को अपने परिवेश में इस प्रकार समाहित कर लेती हैं कि उन्हें पहचान पाना अत्यंत कठिन हो जाता है। इस प्रक्रिया को छद्मावरण कहते हैं (चित्र-9)। इसके माध्यम से, वे पत्तियों, टहनियों, सूखी घास अथवा वृक्षों की छाल के समान रंग एवं आकार धारण कर शत्रुओं से अपनी रक्षा करती हैं।

चित्र-9 आउल बटरफ्लाई में छद्मावरण

हाइबरनेशन - प्रतिकूल मौसम से बचाव हेतु तितलियाँ प्यूपा अवस्था को कुछ समय के लिए स्थगित कर विश्राम की अवस्था में चली जाती हैं, जिसे हाइबरनेशन (शीतनिष्क्रियता) कहा जाता है। अनुकूल मौसम आने पर वे पुनः सक्रिय हो जाती हैं। इस दौरान, उनका रंग एवं आकार परिवेश के अनुरूप समायोजित हो जाता है, जिससे वे शत्रुओं की दृष्टि से सुरक्षित रह सकें तथा ऊर्जा की बचत कर सकें।

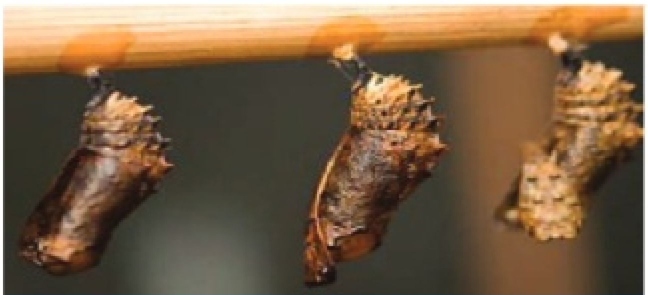

चित्र-10 हाइबरनेशन (शीत-निष्क्रियता)

प्रवासन - मौसम में परिवर्तन के अनुसार, तितलियों की अनेक प्रजातियाँ अपने आवास स्थान को बदलती रहती हैं, जिसे प्रवासन कहते हैं। इस दौरान, वयस्क तितलियाँ अनुकूल परिस्थितियों वाले आवास तक पहुँचने हेतु कई

किलोमीटर तक यात्रा करती हैं एवं प्रायः समूहों में उड़ान भरती हैं। प्रवासन भोजन, प्रजनन, उपयुक्त तापमान तथा सुरक्षित आवास की उपलब्धता से संबंधित होता है। भारत में, विशेष रूप से ब्लूटाइगर एवं डार्कब्लूटाइगर तितलियों के प्रवासन के दृश्य प्रसिद्ध हैं।

बास्किंग - शीत-रक्तीय (कोल्ड-ब्लडेड) जीव होने के कारण, तितलियाँ अपने शरीर का तापमान स्वयं नियंत्रित नहीं कर सकतीं। शरीर को सक्रिय रखने हेतु, वे प्रायः सूर्य के प्रकाश में अपने पंख फैलाकर बैठती हैं, जिसे बास्किंग कहते हैं (चित्र-11)। इस दौरान, तितलियाँ सूर्य की ऊष्मा को अवशोषित कर अपने शरीर का तापमान बढ़ाती हैं, जिससे वे उड़ान भरने, भोजन ग्रहण करने तथा अन्य गतिविधियाँ करने में सक्षम हो पाती हैं। सामान्यतः यह गतिविधि प्रातः काल अथवा वर्षा के बाद अधिक देखी जाती है। कई तितलियाँ पत्तियों, पत्थरों या खुले स्थानों पर पंख फैलाकर धूप सेंकती हैं।

चित्र-11 तितलियों का प्रवासन (माइग्रेशन)

संरक्षण की आवश्यकता - विश्वभर में पाई जाने वाले तितलियों की लगभग 18000 प्रजातियों में से लगभग 1300 प्रजातियाँ भारत में विद्यमान हैं। मुंबई क्षेत्र में 150 से अधिक प्रजातियों का अभिलेखन किया गया है। निरंतर हो रहे विकास, वनों की कटाई तथा स्थानीय वनस्पतियों के क्षरण के कारण, इन अद्भुत जीवों का अस्तित्व संकट में पड़ता जा रहा है। प्रकृति की सुंदरता बढ़ाने के साथ-साथ तितलियाँ परागण एवं जैव विविधता संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इनका संरक्षण हम सभी की सामूहिक जिम्मेदारी है। तितलियों के संरक्षण हेतु (1) छोटे-छोटे तितली उद्यानों की स्थापना (2) स्थानीय एवं देशज पौधों का संरक्षण एवं रोपण (3) रसायनिक कीटनाशकों के उपयोग में कमी (4) प्राकृतिक आवासों एवं हरित क्षेत्रों का संरक्षण (5) जनसामान्य में तितली संरक्षण के प्रति जागरूकता में वृद्धि जैसे उपाय अपनाए जा सकते हैं। इन प्रयासों द्वारा तितलियों की विभिन्न प्रजातियों को सुरक्षित रखा जा सकता है।

आभार

लेखकगण इस लेख की संरचना में सहयोग एवं मार्गदर्शन हेतु डॉ. हुसैन एम. बारभुइया, तकनीकी अधिकारी-ई वास्तुविद्या एवं संरचनात्मक अभियांत्रिकी प्रभाग, भापअ केंद्र का आभार व्यक्त करते हैं।

लेखकगण का परिचय

डॉ. देवेश नारायण

श्री हिमांशु मिश्रा

डॉ. देवेश नारायण, तकनीकी अधिकारी-ई और श्री हिमांशु मिश्रा, तकनीकी अधिकारी-एफ वर्तमान में, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई के वास्तुविद्या एवं संरचनात्मक अभियांत्रिकी प्रभाग में कार्यरत हैं।

कुछ अनकही दास्तानें

मनोज सिंह

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

अनुसंधान रिएक्टर अप्सरा का नाम 'अप्सरा' ही क्यों रखा गया?

भारत एवं एशिया महाद्वीप का सर्व-प्रथम नाभिकीय अनुसंधान रिएक्टर 'अप्सरा' का नाम अप्सरा ही क्यों रखा गया इसके पीछे एक दिलचस्प कहानी छिपी हुई है। आप सभी जानते हैं कि डॉ. होमी जहांगीर भाभा ने नाभिकीय ऊर्जा संपन्न भारत का जो सपना देखा था उसकी शुरूआत 1 MW (थर्मल) स्विमिंग-पूल-टाइप रिएक्टर के 04 अगस्त, 1956 (शनिवार) को मुंबई के ट्रॉम्बे में 15:45 बजे क्रांतिक (क्रिटिकल) होने से आरंभ हुई।

चित्र -1 जवाहरलाल नेहरू अप्सरा स्विमिंग-पूल-टाइप अनुसंधान रिएक्टर की सुंदर नीली चमक निहारते हुए

दिनांक 20 जनवरी, 1957 को एटॉमिक एनर्जी एस्टैब्लिशमेंट ट्रॉम्बे (एईईटी) के उद्घाटन समारोह में रिएक्टर के नामकरण पर गंभीर मंथन किया गया। भारत के पूर्व प्रधान मंत्री जवाहरलाल नेहरू ने अपने अभिभाषण में कहा था कि रिएक्टर के नामकरण के लिए डॉ. के. एस. कृष्णन, तत्कालीन सदस्य, परमाणु ऊर्जा आयोग एवं निदेशक, राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला (एनपीएल), नई दिल्ली ने कुछ नाम सुझाएं हैं, जो संस्कृत से प्रेरित हैं। प्रस्तावित सभी नामों पर विचार के पश्चात संस्कृत भाषा के विद्वान एवं बॉम्बे (जो अब मुंबई) के तत्कालीन राज्यपाल (गवर्नर) श्री प्रकाश से सलाह-मश्विरा किया गया।

चित्र -2 स्विमिंग-पूल-टाइप अनुसंधान रिएक्टर 'अप्सरा' की सुंदर नीली चमक (चेरेंकोव विकिरण)

भारत के पूर्व प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू उद्घाटन समारोह स्थल से स्विमिंग-पूल-टाइप रिएक्टर का अवलोकन करने गए और रिएक्टर ट्रॉली टॉप से सतह की ओर देखते समय उन्हें पानी से आती हुई नीली रोशनी दिखाई दी, जिसे देखकर वे आश्चर्य-चकित और रोमांचित हो गए (चित्र-1)। इसको निहारने पर उन्हें यह दृश्य आसमानी परी

या जल-परी जैसी प्रतीत हुई, जिसे उन्होंने एकाएक 'अप्सरा' कह डाला। (चित्र-2)

इसका वर्णन करते हुए उन्होंने बताया कि अप्सरा का शाब्दिक अर्थ जलपरी या आसमानी परी है जो इस स्विमिंग-पुल-टाइप रिएक्टर के नाम के लिए सटीक है। तत्पश्चात, उन्होंने औपचारिक घोषणा करते हुए कहा कि **"मैं इस स्विमिंग-पुल-टाइप रिएक्टर का नाम अप्सरा रखता हूँ।"**

इस प्रकार, भारत ही नहीं बल्कि एशिया महाद्वीप के प्रथम अनुसंधान रिएक्टर का नामकरण 'अप्सरा' के रूप में पूर्व प्रधान मंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा किया गया। इस अनुसंधान रिएक्टर की क्रांतिकता ने रेडियो आइसोटोप उत्पादन और वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्र में नई संभावनाओं के द्वारा खोल दिए। 'अप्सरा' केवल नाभिकीय अनुसंधान रिएक्टर ही नहीं बल्कि नाभिकीय क्षेत्र में भारत को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में पहला कदम था।

तो है न यह एक दिलचस्प, अनसुनी-अनकही कहानी। ऐसे ही कहानियों का रसास्वादन करने के लिए पढ़ते रहिए "परमाणु विज्ञान" पत्रिका के भावी अंक...

लेखक का परिचय

श्री मनोज सिंह

श्री मनोज सिंह, उत्कृष्ट वैज्ञानिक वर्तमान में, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई के वैज्ञानिक सूचना संसाधन प्रभाग में प्रभागाध्यक्ष के पद पर कार्यरत हैं।

पढ़ें, परखें, सुझाव दें

प्रिय पाठकों,

परमाणु विज्ञान पत्रिका का सृजन अनेक प्रबुद्धजनों के अथक परिश्रम का परिणाम है। तथापि, इसमें परिष्कार की संभावना है। विज्ञान और जनसामान्य के बीच समागम सेतु के रूप में सृजित इस पत्रिका में जिस प्रकार का सुधार वांछित हो उसे ई-मेल के माध्यम से हमें सूचित करें। आपसे प्राप्त रचनात्मक एवं सकारात्मक सुझाव, प्रतिक्रिया और टिप्पणियां इस पत्रिका की विषय-वस्तु, स्वरूप, समसामयिकता, सूचनापरकता एवं रोचकता को नवीन आयाम प्रदान करने में संजीवनी का कार्य करेंगी।

आप अपने बहुमूल्य सुझाव parmanuvigyan@barc.gov.in पर साझा कर सकते हैं। आपसे प्राप्त चयनित सुझावों को आगामी अंकों में उचित स्थान दिया जाएगा।

मुख्य संपादक
परमाणु विज्ञान

मुखपृष्ठ की संकल्पना

'परमाणु विज्ञान' पत्रिका के मुखपृष्ठ और अंतिम पृष्ठ की संकल्पना वर्ण मनोविज्ञान और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के ज्यामितीय दृश्य संतुलन का मिश्रण है। भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई के निदेशक श्री विवेक भसीन ने इस पत्रिका का नाम 'परमाणु विज्ञान' रखने और इसे कैलीग्राफिक फॉन्ट में प्रभावशाली, सुलेख और स्पष्ट पठनीय शैली में प्रस्तुत करने की परिकल्पना की। वे स्वयं, इस पत्रिका के मुख्य संरक्षक भी हैं।

पत्रिका के प्रथम पृष्ठ से अंतिम पृष्ठ तक सजाए गए ज्यामितीय रंगीन आकार परमाणु विज्ञान और प्रौद्योगिकी अनुसंधान एवं विकास के विभिन्न मुख्य क्षेत्रों को इंगित करते हैं, जिनमें रिसर्च रिएक्टर साइरस (CIRUS) की गुंबदनुमा संरचना भी शामिल है। मुखपृष्ठ और अंतिम पृष्ठ में बिंदुओं का समूह शोध रिएक्टर के ईंधन बंडलों के शीर्ष क्रॉस-सेक्शनल सदृश्य हैं।

इस पत्रिका के पृष्ठों के डिज़ाइन की परिकल्पना श्री मनोज सिंह, प्रभागाध्यक्ष, वैज्ञानिक सूचना संसाधन प्रभाग (वै. सू. सं. प्र.) द्वारा की गई है। इसकी ग्राफिक अभिकल्पना को श्री बी. एस. चौहान, वै. सू. सं. प्र., ने आकार प्रदान किया और श्री एस. के. सिंह, वै. सू. सं. प्र. ने इसकी आर्ट प्रिंटिंग में योगदान दिया। श्री हेमंत कुमार स्वैन, डीआरएचआर द्वारा इस पत्रिका हेतु एक अनुपम दृश्य विशिष्टता की परिकल्पना की गई, जिसे वै. सू. सं. प्र. में और अधिक परिमार्जित कर मनोरम बनाया गया।

श्री कुमार अभिनव, वरिष्ठ अनुवाद अधिकारी ने लेखों को जन-सामान्य की सरल हिंदी भाषा में पठनीय बनाने में सक्रिय योगदान दिया है।

संपर्क सूत्र

श्री मनोज सिंह
मुख्य संपादक
परमाणु विज्ञान
वैज्ञानिक सूचना संसाधन प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र
ट्रॉम्बे, मुंबई - 400 085 (महाराष्ट्र)
ई-मेल- parmanuvigyan@barc.gov.in; smanoj@barc.gov.in

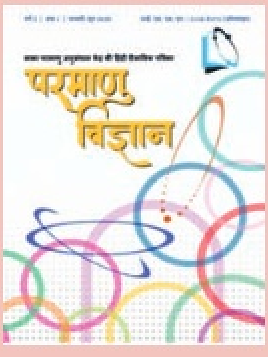

वैज्ञानिक सूचना संसाधन प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र

S I R D

Scientific Information Resource Division
BHABHA ATOMIC RESEARCH CENTRE

प्रकाशक
अध्यक्ष, वैज्ञानिक सूचना संसाधन प्रभाग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र,
ट्रॉम्बे, मुंबई, 400 085, भारत

2026